क्रान्ति-महारथी

अमर शहीद

चन्द्रशेखर 'आज़ाद'

धर्मपाल अवस्थी

रचनाकार

धर्मपाल अवस्थी

पुस्तक

क्रान्ति-महारथी

प्रकाशक

सुषमा प्रकाशन
के—१५७, किदवई नगर
कानपुर—२०८०११
फोन—~~२७~~१४२८
६०

मुद्रक

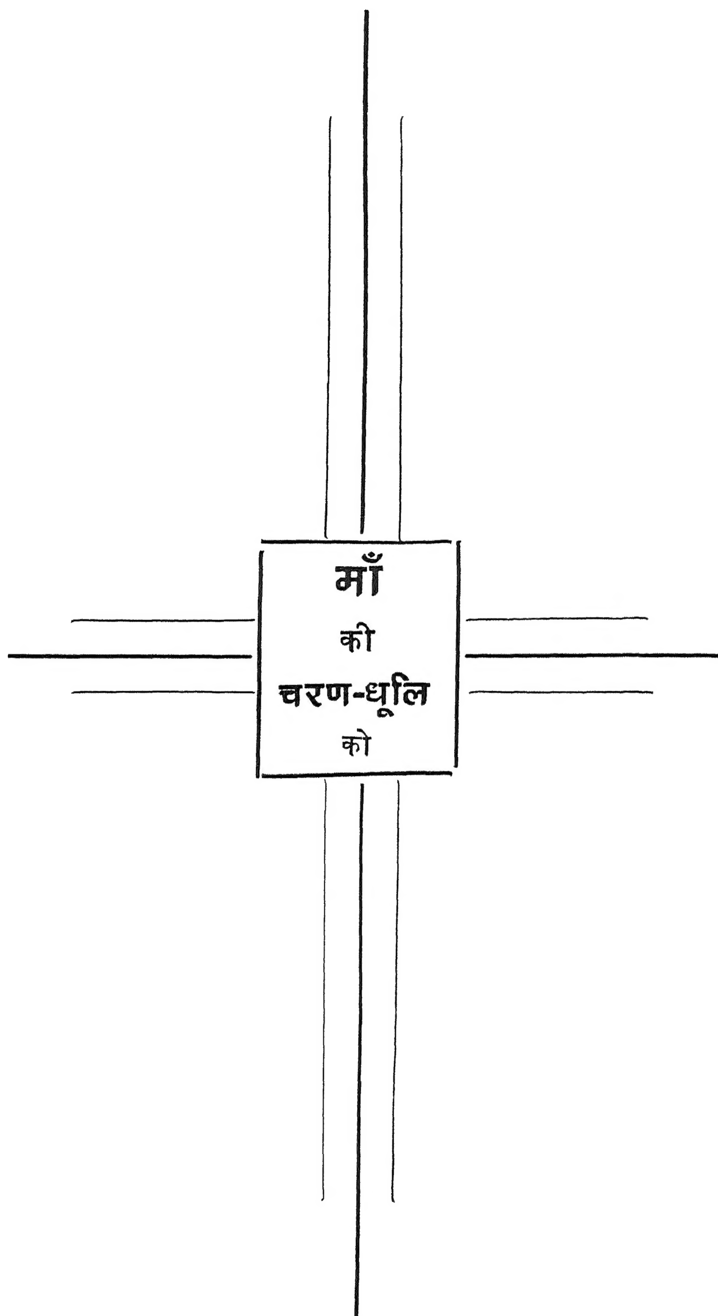
मधुर प्रिण्टर्स
१२८/९३, वाई ब्लाक, किदवई नगर
कानपुर—२०८०११

प्रथम संस्करण

ईसवीय वर्ष—१९९६

मूल्य : पचहत्तर रुपये

KRANTI MAHARATHI (Poetry)
PRICE : Rs. 75/– Only
DHARMAPAL AWASTHI


माँ
की
चरण-धूलि
को

अपनी बात

विद्वद्वरेण्य आचार्यप्रवर श्रद्धेय वात्स्यायन जी के स्नेहाशीष, प्रतिपद-प्रोत्साहन एवं मार्ग-दर्शन से सम्पन्न यह खण्ड-काव्य–'क्रान्ति-महारथी'–सुधीजन-हृदय-रंजनार्थ प्रस्तुत है। आदरणीय पडित जी की सहज आत्मीयता से ओत-प्रोत मेरा हृदय आभार व्यक्त करने की असहज औपचारिकता में नही पड़ना चाहता। ईश्वर करे आप शतायु हों तथा आपके नेह-नीर से साहित्य का क्षेत्र सर्वदा सिंचित होता रहे।

मैं अपनी अल्पबुद्धि, नगण्य-ज्ञान और सीमित-सामर्थ्य के अनुसार इस कृति के माध्यम से 'आजाद' प्रभृति महान् क्रान्तिकारियों के चरणों में कुछ श्रद्धा-सुमन भेंट करके हृदयनिहित चिर-कामना की कुछ पूर्ति भर कर सका हूँ। सन्तोष तो कर सकता हूँ, पर गर्व नहीं। स्वतन्त्रता के लिए हुतात्मा क्रान्तिकारियों की जीवन-गाथा अनन्त है। मेरी यह कृति तो उनके प्रगतिशील पगों से झरी धूल की जरा सी झरन भर है।

देश के राष्ट्रीय चरित्र में निरन्तर गिरावट आ रही है। कारण ? नयी पीढ़ी को अपेक्षित संस्कारों से वंचित रखा गया। भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम से जुड़े क्रान्तिकारियों की अदम्य देशभक्ति और उनके जीवनोत्सर्ग के जीवन्त एवं प्रेरणाप्रद प्रसंगों से उन्हें परिचित कराना तक आवश्यक नहीं समझा गया। इसी से आधुनिक पीढ़ी में क्रान्तिकारियों के प्रति समुचित श्रद्धा तथा उनके आदर्श जीवन का अनुकरण करने की प्रवृत्ति का प्राय: अभाव दिखता है।

कानपुर नगर के पुस्तकालयों और पुस्तक-विक्रेताओं के पास क्रान्तिकारी साहित्य की अनुपलब्धता भी बड़े खेद का विषय है। मेरी यह कृति इन अभावों को दूर करने में यदि किंचिन्मात्र भी अपनी उपयोगिता सिद्ध कर सकी, तो मैं अपने को धन्य समझूँगा। अन्तत: सभी शुभाकांक्षी गुरुजनों एवं हितैषी मित्रों के प्रति विनम्र नमन के साथ साभार–

□ **धर्मपाल अवस्थी**

सेवक-वात्स्यायन

Sewak-Vatsyayan

ज्योतिरहम्भिमस्य



पण्डितधर्म्मपालावस्थिकृतकाव्यक्रान्तिमहारथी–

कानपुर-भौती से उन्नाव के गङ्गातटस्थ ग्राम बदरका में जा बसे उन्नीसवीं सदी के अन्त-घटित दुर्भिक्ष-त्रास से मालवा-प्रदेशस्थ झाबुआ-भावरा में आवसित पण्डित सीताराम तिवारी के पुत्र चन्द्रशेखर का जन्म हुआ, समयात् भील-बालकों के संसर्ग से उन्होंने तीरन्दाज़ी, हिंस्र-पशु-शिकारादि में दक्षता हासिल कर ली, मन पढ़ने में न लगता पर प्रारम्भिक शिक्षा हुई यहीं, घूम-फिर मोती बेंचते बम्बई-तः आगत व्यापारी से महानगरी का रोचक वृत्तान्त सुन तूष्णीम् आप एक दिन वहाँ जा पहुँचे, अर्थकृच्छ्रतया दिन-द्वय में कल्पना-ज्वार ठण्डा होने पर जलयान-रँगने की मज़दूरी के बाद सत्वरबुद्धिविकासार्थ, अध्ययनोद्देश्येन काशी आ गये जहाँ शाला में 'लघुसिद्धान्तकौमुदी' के अध्ययन, ससंयम जीवन, सकृदशन, गङ्गा-सन्तरणादि से सुशरीर को अद्भुत, सुगठित संस्वास्थ्य प्राप्त हुआ। अखबारादि-जनित नवीन चेतना, देश-हित-चिन्तन से संस्कार-गत क्रान्तिभावना बलवती हो उठी। असहयोग-आन्दोलन से जागे देश में दमन-चक्र जारी था, सत्या-ग्रहियों के बीच निकल पड़े, प्रस्तर-खण्ड उठाया, बेंत बरसाने वालों में से एक सिपाही के सिर में देमारा, लहूलुहान हो गया। पेश होने पर अपना नाम,-आज़ाद, काम,-आजादी के कारख़ाने में मज़दूरी और निवास,-जेलख़ाने में बताया, क्रुद्ध मैजेस्ट्रेट ने पन्द्रह बेतों की सख्त सज़ा सुनाई, जिसे घोर यातनापूर्वक क्रूरतम ज़ेलर गण्डासिंह ने अञ्जाम दिया। हर साँस में 'वन्देमातरम्'

का निनाद करते वेत्रदण्डपरीक्षोत्तीर्ण का निखिल काशी ने हृदिक अभिनन्दन किया। अब इसी नाम से प्रख्यात, कभी गिरफ़्तार न होने के लिए प्रतिज्ञात, अचूक निशानेबाज़ आज़ाद नौजवान ने सजीव अपना पावन शरीर मातृभूमि के शत्रुओ को फिर कभी छूने नही दिया। क्रान्तिकारियों के प्रधान सेनापति चन्द्रशेखर आजाद क्रान्ति-यज्ञ के पुरोधा थे। जितनी योजनायें बनी, सभी के उद्‌भावक, नियामक, संचालक और सूत्रधार चन्द्रशेखर आज़ाद थे, क्रान्तिकारियों को नियुक्ति देते, जो काम जिससे सर न होता—ख़ुद अन्जाम देते थे। शान्ति और अहिंसा से नही, स्वतन्त्रता के लिए सशस्त्र क्रान्ति से जङ्ग छेड़ी जानी चाहिये,- इस विचार-धारा के धनी लाहिड़ी, शचीन्द्र, मनमथ, बख्शी, अश्फ़ाक, बिस्मिल, योगेश,-जैसे अनेक उन दिनों काशी में मौजूद नौजवानों से मिलन हुआ। चन्दा माँगने में गोपनीयताबाधाऽऽशंका से मजबूरन् डाके डालने में मानवीयता-जनित विफलतावश शस्त्रादि के लिए धन की अपरिहार्या आवश्यकता में उत्तराधिकार में धन-प्राप्त्याशा से चन्द्रशेखर ग़ाजीपुर के एक मालदार गद्दीधारी रुग्णता में मरणासन्न उदासीन साधु के चेले बन वहाँ रहने लगे। योग्य शिष्यसेवा से महन्तजी पूर्ण स्वस्थ और हट्टे-कट्टे हो गये। योजना-निराश आज़ाद मित्रमण्डली में वापस आ गये और योजनापूर्वक नौ-अगस्त-उन्नीस-सौ-पच्चीस की रात दस क्रान्तिकारियों ने काकोरी के पास रेलवे-ट्रेन से सरकारी ख़जाना लूट लिया। देश, देशभक्तों को आतंकित करने न्याय-नाटक चला, बिस्मिल, अश्फाक़, रोशन, लाहिड़ी को फाँसी दे दी गयी। फ़रार, साधुवेशी आजाद सातार-नदी-तट-वर्त्तिनी सुनसान झोंपड़ी में रहे, एक सिपाही से सामना हो जाने पर बास-वेश विहाय झाँसी आ गये। भगवान्‌दास, सदाशिव, राजगुरु, सुखदेव, महावीरसिह, जयदेव, शिववर्मा, सालिग, विजयकुमार, वैशम्पायन, सुरेन्द्र पाण्डेय, यशपाल, यतीनदा और भगवतीचरण,-जैसे क्रान्तिकारियों की संश्लिष्टि होने लगी,

कानपुर में शहीदेआजम भगतसिह से मुलाक़ात हुई । माता-पिता को धन भेजने की बात न मान, साथियों के अनुरोध पर चन्द्रशेखर एक रात घर गये, मिलनोपरान्त पुत्रागमनसुखसुषुप्त माँ और जागते पिता को प्रणाम दे निर्धारित समय से कर्त्तव्य-पथ पर वापस आ गये । भारतीयों को और अधिक मूर्ख बनाने सन्–१६२८ मे आये साइमन का लाहौर मे सशान्ति-विरोध-नेतृत्व करते पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय जिस डी एस्.पी. के दण्डप्रहारों से घायल हुए दिवङ्गत हो गये उस साण्डर्स का वध-विधान पूरा कर राजगुरु, भगत और चन्द्रशेखर फरार हो गये । आठ अप्रैल-उन्तीस को श्रमिक-विरोधी ट्रेड-डिस्प्यूट-बिल का परिणाम संसद-सभापति-द्वारा खोलते ही तन्निमित्त नियुक्त, दर्शक-दीर्घा में खडे दत्त और साण्डर्स-काण्ड के प्रमुख अभियुक्त भगतसिह को ऐसेम्बली में बम के धमाके के साथ 'इन्क़िलाब-ज़िन्दाबाद' का नारा बुलन्द करते, न्यायमञ्च से संगठन-विरुद्ध-भ्रामक-प्रचार-निवारणार्थ, आम आदमी की हमदर्दी प्राप्त करने, बमकाण्ड-महत्त्व समझाने तथा च समाजवादी चेतना जगाने की पूर्वयोजनाऽनुसार स्वेच्छया गिरफ़्तार सुन, अदालती फ़ैसले के पूर्वानुमान से भगत-विना चन्द्रशेखर लक्ष्मण-विहीन राम–जैसे हो गये । छापों में राजगुरु, सुखदेव, कुन्दन, यतीन्द्र, महावीर, जयगोपाल, फणीन्द्र, कमल त्रिवेदी, गया, किशोरी, विजय, प्रेम, जयदेव, शिववर्मा, सदाशिव, भगवान्दास गिरफ़्तार कर लिए गये, जयगोपाल और फणीन्द्र मुख़बिर बन गये, वाइसराय इर्विन की ट्रेन उडा दी गयी, पल-विलम्बेन उसके प्राण नहीं गये, जेल से आते-जाते भगत को छुड़ा लेने की योजना शेखर ने बनायी पर बम जाँचते वोहरा सहसा शहीद हो गये, घर में रखा बम दूसरे दिन फट जाने से योजना विफल हो गयी, कारा में दो-महीने-तीन-दिन भूख हड़ताल कर यतीन्द्र-दा अनन्त नींद में सो गये, सात को जीवन-पर्यन्त काला पानी, शेष को कई-कई सालों की सज़ा, राजगुरु, सुखदेव और भगतसिंह को सज़ायेमौत सुनाई

गयी । मुख़बिर से बाख़बर, सत्ताईस फर्बरी–१९३१ को प्रातः प्रयागस्थ अल्फर्ड-पार्क में विश्वेश्वर के साथ सपुलिसबल चारों ओर से घेरा डाल अधीक्षक नॉट बाबर ने बिना सावधान किये गोली चलाई, शेखर की दाहिनी क़लाई टूट गयी, शेखर ने गोली से जवाब दिया, गोरे की क़लाई तोड़ दी । भारी पुलिस-दल का अकेले नरनाहर से घमासान हुआ, रक्त-स्नात शेखर बायें हाथ से माउजर लिये चक्रव्यूह में फँसे अभिमन्यु थे । बिसेसर ने जैसे ही जुबान खोलनी चाही, वीर ने खल का जबड़ा उड़ा दिया । शेखरीय माउज़र में अब सिर्फ़ एक गोली थी, आजाद की आत्म-प्रतिज्ञा कौंध उठी,-जन्मभूमि, जननी को सान्तिमप्रणाम माउजर स्व-माथे में लगा आजाद चन्द्रशेखर ने ट्रिगर दवा दिया । सत्य यह भी है कि आक़ाओं की वाहवाही लूटने,–पद, पुरस्कार के लालची इन देशी-विदेशी क़ायरों ने मृतक-शरीर पर सब ओर से देर तक गोलियाँ बरसायी और सन् १९०६ में जन्में नर-केसरी के निरात्म शरीर तक पहुँचने के लिए यह भारी हजूम घण्टों बाद साहस जुटा पाया । मातृभूमि के प्रति हौतात्म्य की यह अग्निकथा कविता के धर्मपाल पण्डित अवस्थी की इस सुक्ता कृति गीतिकविसिद्धा प्रसिद्धा घनाक्षरी के लगभग अढ़ाई सौ छन्दों में भाव-भव-मुद्रया सुनाई, गाई गई है जिसका हरसौज, सरल छन्द चन्द्रशेखर आजाद की अचूक गोली का सा लक्ष्यवेधी असर रखता है । इन छन्दों के वश में भाषा ऐसे नाचती है जैसे क्रान्तिकारियों के हाथ में पिस्टल नाचती है । शब्द बाण की तरह छूटते, लक्ष्यवेधोपरान्त वापस चले आते है । कवि के शब्द ख़र्च नहीं, क्षणे-क्षणे नवतामुपेत नूतन अर्थ से भरे जाते रहते है । काव्यभाषा का वैशिष्ट्य भी यही है । शब्दाधिकारी वैय्याकरण नहीं, कवि होता है, अरबी, फारसी के उपयोगी शब्दों–जिन्हें उर्दू-शब्द ही कहा जाना चाहिये–और काम से अंग्रेज़ी शब्दों से भी अवस्थी जी को परहेज़ नही है, मुहावरों का प्रयोग-मोह निरन्तर विद्यमान है, नूरजहाँ-कार गुरुभक्तसिंह की तरह ।

"कमीने" और "साले"–जैसे शब्दों का भी अपनी व्यंजना में अवस्थी जी ने बड़ा सटीक प्रयोग किया है। उनके व्यंग चुटीले, तिरछे नहीं, सीधे होते हैं। उन्हें भाषा का संस्कारकर्त्ता नहीं, सुप्रयोक्ता कहा जा सकता है। संस्कृत-नाटकों में जैसे स्त्री-आदि पात्र प्राकृत बोलते हैं, नारी-प्रसंग जहाँ हैं अवस्थी जी भी बहुधा कानपुर-उन्नाव की जनपदीय बोलियों का प्रश्रय लेते दिखाई देते हैं। संस्कृतज्ञ अवस्थी जी के रूपक, व्यक्तित्व-चित्र, हेतूत्प्रेक्षाऽऽदि अन्यान्य सहज आये अलंकार-स्वरूप यद्यपि संस्कृत की परिनिष्ठता तत्समता के निकट होते हैं, तो भी उन्हें महावीरप्रसाद द्विवेदी नहीं, खड़ी बोली का भूषण कहा जा सकता है, यद्यपि 'शिवराज-भूषण' के कवि में भी खड़ीबोलीत्व अनुपस्थित नहीं था। अनुष्टुप् से परिप्रवृत्त मुक्तक दण्डक के एक भेद वीर और शृंगार के लिये अधिक उपयुक्त घनाक्षरी को चौदहवी शताब्दी के कवि मार्दङ्गिकसेन ने बनाया और इसका पहला प्रयोक्ता ग्रन्थ "सूरसागर" है। यह सोलह, पन्द्रह की यति पर एक सौ चौबीस वर्णों का छन्द है, गुर्वन्त होना आवश्यक है, 'रूप' और 'देव' नाम से क्रमेण एक-सौ-अट्ठाईस और एक-सौ-बत्तीस वर्णों में अन्य भेद भी हुए जिनके अन्त में गुरु-लघु भी हुआ, अध्यात्म के आधार पर देव और शृंगार के नाम पर रूप,–ये नाम दिये गये पर सर्वाधिक प्रचलित घनाक्षरी ही रहा,–इसमे अक्षरा घनाक्षरता होनी चाहिए, अपने कवित्वपूर्ण मनोहारी गुण के कारण मनहरण नाम भी मिला। संस्कृत का अनुष्टुप् अपनी लोक-प्रियता में साक्षात् श्लोक ही कहा जाने लगा, उसी प्रकार हिन्दी का घना-क्षरी छन्द भी साक्षात् कवित्त, अर्थात् कवित्व ही कहा जाने लगा। कविगंग से लेकर 'विनयपत्रिका', 'कवितावली', 'राम-चन्द्रिका', और इसके सिद्धिकाल-रीतिकाल से लेकर भारतेन्दु और 'उद्धवशतक' के रचनाकार तक ने इसी छन्द का प्रयोग किया और लोगों में धारणा बन गयी कि यह मात्र ब्रजभाषा का छन्द है और यह भी कि इसके द्वारा केवल मुक्तक या स्फुट

रचनाये ही सम्भव हैं,–इसमें प्रबन्ध-क्षमता का अभाव बताया गया, 'सूरसागर' और 'उद्धवशतक' की प्रबन्धात्मकता भी है, इस पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। फलतः 'रस-कलश', 'साकेत', 'कुरुक्षेत्र' और 'सुमनाञ्जलि' के जैसे कवियों के साथ गोपालशरण सिंह ने भी खड़ी बोली घनाक्षरी के बहुत अच्छे प्रयोग किये पर ये प्रयोग प्रायः प्रयोग तक ही सीमित बने रहे, स्वकीयम्भूत परिप्रस्तार की प्रतीक्षा न कर सके। अवस्थी कवि-वर धर्मपाल ने अपने पूर्ववर्त्तीखड़ीबोलीघनाक्षरीकारों के समान रहकर और कही शिल्प और वस्तु दोनों में बहुत आगे बढ़कर भी उक्त दोनों भ्रान्त धारणाओं को प्रस्तुत अपने पुरुष काव्य के सम्यगालोक में ध्वस्त कर दिया है और यह उदाहरण पेश किया है कि विना शृंगारी अवतारणा के भी वीरकाव्य लिखे जाते है और उनके आस्वाद्यात्मक रस-परिपाक में दूर-दूर तक कोई कभी नही आती। 'क्रान्ति-महारथी' विना शृगारी अवतारणा का वीरकाव्य है। जिसमें लयानुसार भाव और चित्र व्यंजित करने की सक्षमता है--खड़ी बोली-घनाक्षरी मे लिखा गया प्रबन्धकाव्य है और इसके निर्विघ्न रसास्वाद से सहृदय की यह धारणा पुष्ट होती है कि घनाक्षरी हिन्दीखड़ीबोली मे हमारा राष्ट्रीय छन्द है। सहृदय दृष्टिमानों ने बहुत पहले कह दिया है कि कवि की सहृदयता और सामर्थ्य की पहचान इसमें है कि उसे अपनी विवक्षा मे भावपूर्ण स्थलों की पहचान कहाँ तक है। प्रणाम', उदय', वेत्रदण्ड', महन्त', काकोरी-काण्ड', साधुवेश', मातृमिलन', साण्डर्सवध', ऐसेम्बली-बम-काण्ड', सस्मरण' और अमर बलिदान'–शीर्षीय ग्यारह सर्गो में बाँट-कर लिखी चन्द्रशेखर-कथा में अवस्थी जी ने यह परीक्षा उत्तीर्ण की है। यों तो इस सम्पूर्ण काव्य में पदे-पदे वह यह परीक्षा उत्तीर्ण करते चले है पर वेत्रदण्ड, मातृमिलन और अमर बलि-दान के प्रसंग उन्हें विशेष योग्यता का अधिकारी बनाते है, मातृमिलन में वह सर्वोच्चाङ्काधिकारी सिद्ध हैं। आज़ादी के बाद

भ्रष्ट से भ्रष्ट किसी राजनेता, भ्रष्ट से भ्रष्ट किसी बड़े अधिकारी को साबित सजा पाते नहीं देखा गया है । उसी देश मे आज़ादी से नातिपूर्व आजादी के उग्राग्रदूत, दु:खनि:संग अवधूत, मृत्युभय से अनभिभूत एवं क्रान्ति-स्यन्दन के सूत-से सपूत को जघन्य वेत्र-प्रहारों से रक्त-रञ्जित देखा गया। यह दृश्य लज्जा-ग्लानि-जनक, रोमांचकारी रहा होगा, उस समय के इतिहास-पृष्ठ को कृष्ण-वर्ण बनाने वाला है पर हमारे अपराजेय योद्धा की परीक्षोत्तीर्णता से विश्व में हमारा मस्तक ऊँचा करने वाला है । अवस्थी जी ने हमारे इस मर्म को छू लिया है,–भयंकर सर्दी की रात मे गण्डासिंह ने ओढना-बिछौना न दिये जाने का आदेश दिया और आधीरात के समय क्रान्ति के नगीने आज़ाद की दशा कमीना इस कामना से देखने चला कि हिम-जड़-तन-ढीठ दया की भीख माँगेगा किन्तु देखा कि वीर हूँक-हूँक कर दण्ड पेल रहा था, सीने की नाप ड्योढ़ी हो चुकी थी । रक्त बहता है, माँस के छीछड़े उछलते है, खाल तो पहले ही बेंत से उधड़ जाती है । वेत्रदण्ड प्राणदण्ड से भी भयानक है, प्राणदण्ड में मौत एक बार आती है पर वेत्रदण्ड में तो मौत बार-बार आती है : भला भूषण के नायक शिवाजी महाराज ने यह यातना कहाँ झेली होगी सबही के ऊपर ठाढो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो छैहजारिन के नियरे–बस ! जो अवस्थी जी के नायक ने झेली है । गण्डासिह चाहता था कि त्राहि-त्राहि बोले किन्तु हरसाँस में 'वन्देमातरम्' की गर्जना होती थी, चाहता था कि राम-राम चीखे किन्तु वन्देमातरम् की ललकार उठती थी, चाहता था कि दया की भीख माँगे पर बदले मे वन्देमात-रम् की हुंकार होती थी, सभी दिशाये वन्देमातरम् से गूँजने लगी। मातृमिलन का प्रसग बेजोड़ है । यह व्रजवियोगव्यथाकथाऽश्रुधारा सम्पात-सम्प्रवाह को पुनरुज्जीवित करने वाला है। जगरानी का एकमात्र जीवित पुत्र कितनी लम्बी अवधि के बाद, कितनी आशा देरी के लिए घर आने को है पर माँ को विश्वास ही नहीं था तो भी घर से मकड़ी के जाले छुड़ा डाले, [illegible]

मन्दिर हो आयीं, गौरापार्वती की मनौती की, तुलसी में जल चढाया, सूर्य को अर्घ्य दिया, मन से संकल्प किया कि आज इन नेत्रों से पुत्र को देखने के बाद ही अन्न-जल ग्रहण करेंगी। साहस करके लोटाभर छाछ माँग लाई, छपरा से तोड़-तोड़ कर तुरइयें रखीं, अपने मलिनांचल से खोल चार धेले बनिये को दिये, उससे गुड़, जीरा और हींग ले आयीं, मटकी में रखी दाल बीनी, छरी और पछोरी। नेत्र मूँद बार-बार सगुन मनाती दुर्गामाता से कुशल मनाती हैं। क्षण में घर आती, क्षण भर में दौड देहरी पर जाती हैं, इधर-उधर अपने स्वाभिमानी पुत्र को झाँकती फिरती है, फिर मुँड़वारी पर चढ क्षितिज-पर्यन्त टकटकी लगाकर अपनी जिन्दगानी के अवलम्ब को देखती-सी रह जाती है। जो हृदय दुःख के पहाड़ लील गया उसमें थोड़ा सा सुखानुमान समाने में नहीं आता, निकला पड रहा है, सुत-विरह का इतना बड़ा समुद्र पार किया पर मिलन की आशा का छोटा सा सरोवर पार नहीं हो पा रहा, ख़बर के बिना मजबूरी में सब्र किया, ख़बर मिली तो अब सब्र नही किया जाता। बारह वर्ष तक धैर्य धारण किया पर बारह घडी का धैर्य अब रख पाना सम्भव नहीं हो पा रहा है। वियोगिनी माँ के घाव सूखने लगे थे, आने की ख़बर भेज-कर मानों उन घावों की पपड़ी उचार दी है, और पुत्रागमन पर माथा चूम-चूम, सुत-देह-गन्ध सूँघ-सूँघ कर खान-पान की असावधानी-हेतु बार-बार पुत्र को डाटती हुई उसकी पुष्ट देह-यष्टि को भी दुर्बल बतातीं, कोप कर-कर के, रूठ-रूठ कर, आँसू ढाल-ढालकर अपने कोखजाये को दुःखदर्द सुनाती हुई बीच-बीच में ही पूजा में निरत सीताराम जी को टेर-टेर कर बुलाती हैं कि पुत्र आ गया है। पिता-पुत्र वार्त्ता-रत हैं–बीच में ही आ जाती हैं–बतरस छोड़ो, पहले भोजन करलो, बातों के लिए तो अनन्त समय पड़ा है–रोटी, दाल, भात, साग और रायता बना है, साथ-साथ सोंधी-सोंधी हीग भी डाली है और जीरे का बघार है, एक तो साग, दाल ठण्डे हो जायेंगे, दूसरे थकामाँदा

हमारा लाल न जाने कब का भूखा है। यह मातृमिलन हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि है। सूर को कहा जाता है कि वह अपनी बन्द आँखों से बालजीवन का कोना-कोना झाँक आये थे, हमें लगता है साक्ष अवस्थी जी वियोगिनी माँ के हृल्लोक का कोना-कोना झाँक आये उसकी छवि अपनी इस अनुभूति में प्रतिच्छवित करने के लिए वहाँ से अपने साथ लेते आये हैं और इससे वह हमारे प्रणाम के अधिकारी होते हैं। मातृत्व का ऐसा भावशाबल्य, भावों का ऐसा अभिसधन, ऐसा उदय, शान्ति और फिर उदय अन्यत्र दुर्लभ है। जगरानी का जगद्वन्दनीय, जगदाराध्यस्वरूप अवस्थी जी की सर्वाभिधायिनी सृष्टि है। यह स्थल इतना महत्त्वमय है कि इसके मद्देनजर हम इसे करुणा-विगलित वात्सल्य-रस का ग्रन्थ कह सकते है, ऐसे—जैसे भावों से अभिभूत होकर ही करुण को ही एकमात्र रस कहा गया होगा, इसका गौरवबखान कोई कर सके तो भी कहा जायगा कि यह समय कहे से लागति प्रीति सिखी-सो, केशव के शब्द उधार लें तब कहेंगे कि बानी जगरानी की उदारता बखानी जाय, ऐसी मति कहौ धौ उदार कौन की भई। जगरानी के गुड़, जीरा और बघार से सोंधी-गन्धाभिबन्ध-सन्ध मन 'उद्धवशतक'—कारोक्ति को किञ्चिदन्तर से यों कहना चाहेगा, जसुमति मैया के कनूका औ' तिनूका सम सम्पति त्रिलोक की विलोकन मैं आवै ना'। अवस्थी जी के चरित्र-धनी पिता मुन्सिफ़ के साधारण अर्दली थे, अवस्थी जी अक्सर यही कहते सुने गये हैं कि उन्हें स्वपिता पण्डित रामगुलाम में चन्द्रशेखर-पिता, और देशभक्त, सदाचारी पण्डित सीताराम में अपने पिता तथा माँ सुखरानी में तपःमूर्त्ति जगरानी और जगरानी में स्वमाता दिखाई देती रही हैं। लगता है इसी आत्म-भाव से गलित अवस्थी जी का सारा हृदय-रस एतावद-भिमुख हुआ बह गया है। तो क्या हम कहें कि हमें धर्मपाल में चन्द्रशेखर दिखायी देते हैं। माँ शहीद होने जा रहे पण्डित राम-प्रसाद बिस्मिल की भी है पर वह ज्ञानवती है, जगरानी नहीं

जानती कि ज्ञान क्या है, त्याग क्या है, यह क्या है, वह क्या है, इस देवी के अन्दर-बाहर तो मातृत्त्व के अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नहीं तभी तो उसे हृष्ट-पुष्ट पुत्र दुर्बल लगता है, क्रान्तिसेना का कमाण्डर-इन-चीफ खान-पान में असावधान, नासमझ लगता है। इस मातृशक्ति का कितना त्याग है, उसमें इसका-त्याग, आत्मत्याग का सुधिबोध ही नही है, ऐसी स्थिति में तो बिस्मिल की माँ के लिए कहे गये शब्दों से ही काम चल सकता है कि-प्राणदान हो कि पुत्रदान दोनों ही महान् ! फिर भी न जाने क्यों यह भावना हमारी है : पुत्र का ये प्राणदान तो महान् है ही किन्तु माँ के पुत्रदान की महत्ता और न्यारी है ! सही नहीं है पर यह लगता है मानो 'न्या' निकल पडा हो और महत्ता न्यारी से ही महतारी शब्द रह गया हो। जगरानी ब्राह्मणी और बिस्मिल-माँ क्षत्राणी लगती है। यह मातृमिलन विछोह से अधिक गहन-मर्मान्तिक है यहाँ रस-सञ्चारियों का ज्योतिपुञ्ज विद्यमान है, कौसल्या, सुमित्रा और बिस्मिल-माँ शक्तिशालिनी मातायें हैं पर श्रद्धा जीतने की कशिश जितनी जगरानी में है उतनी किसी में नहीं इस मोहान्ध माता का लोभ किसी त्याग से कम बड़ा नहीं। जगरानी के मलिनाञ्चल में दूध ही दूध है, केवल निर्मल-स्फीत दुग्धामृत, गुप्तजी वाला पानी शायद इसकी बूढ़ी आँखों में नही। इस दैवी मातृचरित्र की शक्ति उसकी मातृ-सुलभ दुर्बलता में है। कोई पूछ देखे, इसके चित्रण में पुत्र अवस्थी स्वावस्था में कितने ही अडोल हों, रोये जरूर होंगे। किसी ने कहा है—करुणा के जितने प्रसंग हैं, सरस्वती के रुदन हैं। ऐसा है नही पर वृद्धा माँ जगरानी के सामने, इस हृदय की चकपकाहट के सम्मुख कौसल्या, देवकी, यशोदा, क्षण के लिये पीछे छूटी जान पड़ती हैं। इस कृति का अघोषित नाम जगरानी और जगरानी के त्याग का मूल्य चन्द्रशेखर आज़ाद के बलिदान से बड़ा लगता है। लोक जीवन में नारी-मनोविज्ञान का सहज-सुकुमार-पवित्र-स्वरूप-परिचय हमें साधुवेश में रह रहे चन्द्रशेखर के व्यक्तित्त्व के

प्रति नारियों द्वारा सुव्यक्त आत्मीयता-पूर्ण प्रतिक्रियाओं से हो जाता है। चन्द्रशेखरीय नेपथ्याभासगत प्रसंग में उभय-बीच-चनन आगे-पीछे भगत और शौकेशहादत मे भगत के रक़ीब राजगुरु के धावनानुधावन में रणछोड़ वाली रणनीति की धरती पर दोबारा होने जा रही अवतारणा की परिकल्पना भी वस्तुतः प्रभाव-कारिणी है। तुलसी और अफ़लातून को साथ न लें तो भी कहा जा सकता है कि विना सद्विचार के कविता दरिद्र होती है। प्रबन्ध में विना विचार का नायक लपूस होता है, आध्यात्मिकता के अर्थ में कुछ भी हो "पद्मावत" की कथा का नायक रत्नसेन लपूस है। अवस्थी जी ने अव्वल तो अपना चरितनायक ही आला चुना है, दूसरे साहित्य की दृष्टि से भी उसके व्यक्तित्व को अपनी प्रतिभा से परमोज्ज्वल व्यक्तित्व प्रदान किया है। यद्यपि आज़ाद भी इन्ही विचारों के थे और स्वाभाविक ही कवि ने भी अपने विचारों का काव्य कलात्मक सुमिश्रण कर सुचिन्तित नायक के विचार-प्रसंगों को समुचित और पर्याप्त जगह इस काव्य में देने के लिये 'महन्त' और 'साधुवेश' नामक सर्ग चुने है। जहाॅ कवि के कुरूपा 'काव्य मे सौन्दर्य का और मरघट' काव्य मे वैराग्य का यथार्थ है वैसे ही इस कृति में महन्त'-सर्गान्तर्गतयथार्थधर्माचरण, पाखण्डक विद्रूप से ताल्लुक़ रखने वाला है, साधुवेश' के अन्तर्गत गुलामी की जञ्जीरों का यथार्थ मौजूद है। यहाँ चन्द्रशेखर का विचारक और चिन्तनशील स्वरूप स्पष्ट होकर सामने आता है। आरम्भ की बम्बई-दर्शन-प्रतिक्रिया भी इसी यथार्थ कोटि की है। महन्त'—प्रसङ्ग में तो हास्यरस का एक छीटा भी है,—जब शिष्य की निष्ठापूर्वक सेवा से मरने के बजाय महन्तजी हट्टे-कट्टे हो गये और शेखर का योजना-निराश होकर मित्रमण्डली में पुनरागमन मन में इस कहावत को हँसते हुए उतारना चाहता है कि लौट के बुद्धू घर को आये। यह कहानी ट्रेजडी है, ट्रेजडी मन पर बहुत भारी पड़ती है, इसलिए मन को मध्यविश्राम के लिये किसी हल्केपन-का-सा

ज़रूरत पड़ती है, इसीलिए शेक्सपियर जैसे ट्रेजडी-साहित्यकार कथा-क्रम में ड्रैमेटिक रिलीफ़ की अवतारणा करते रहे हैं, महन्त का उक्त प्रसङ्ग भी ड्रैमेटिक रिलीफ़ की ही उद्धरणी प्रस्तुत करता है। संस्मरण'–नामक सर्ग में कोई कथा-क्रम तो नहीं, वह भी शायद स्वमनोविनोदात्मकता आदि में ड्रैमेटिक रिलीफ़ के लिये ही है जिसकी आवश्यकता भी होती है और सार्थकता भी। इलाहाबाद का अल्फर्ड-पार्क अमरबलिदान का महाकेन्द्र है। अमरबलिदान' इस घहराती कथा-महाधारा के धारा-सम्पात का अन्तिम अध्याय है। यह वही अध्याय है, जहाँ जगरानी का महावीर सपूत स्कन्धावार में नहीं, युद्धभूमि में, मातृभूमि की बलिवेदी पर आत्माहुति से अपने जन्म-पक्ष शुक्ल-पक्ष की अर्थ-वत्ता प्रमाणित करते हुए आजाद नाम सार्थक कर जाता है। इस अध्याय में शृंगार (मृत्यु से), करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्‌भुत और वैराग्य को मिलाकर सब रस हैं पर हास्य बहुत जगहों अपनी सार्थकता नही रखता, शायद इसी से आचार्यो ने इसे उपरस कहा होगा। अमरबलिदान का प्रसङ्ग अतीव मर्मपूर्ण और अन्तर्‌तम को बेधने वाला है। कथाऽवसान का यह स्थल अपनी चित्रोपमता और निःसर्ग-निःश्रयित प्रकृत्यात्म-भाव का निदर्शन है। प्रकृति न तो किसी के सुख से सुखी, किसी के दुःख से दुःखी भी नहीं होती, अन्दर-अन्दर ऐसा होता भी हो तो हम संसारी ऐसा कुछ वास्तव में नहीं जानते पर मनुष्य का मन बड़ा विलक्षण है, कवियो का तो विलक्षणतर तभी तो शीतलता का पर्याय चन्दन, 'चन्दन दाहक गाहक जी को' भी होता है। प्राकृतिक उपादान कभी हमारे साथ सहानुभूति रखते, कभी साथ रोते-गाते और कभी हमारे साथ उपहास करते भी जान पड़ते हैं, वे हम पर सर्वथा कृपालु होते भी बताये गये हैं, इस कोटि के प्रकृति-चित्रण को प्रकृति का मानवीकरण भी कहते है, जिन्होंने प्रकृति में पारस्परिक सम्बन्ध-व्यापार को, प्रकृति मानवात्मा की ही प्रतिष्ठा कर मानवीय सम्बन्ध-व्यापार के अनुसार देखा, कहा,

इसी वर्ग के कवियों के प्रकृति-बोध को ही अभी थोड़े दिन पहले हमारे यहाँ 'छायावाद' कहा गया । विधि का विधान देख प्रातः-काल लालिमा लिये दिनमणि पियराने लगे । निज तेजांश पर तमिस्त्र की कुदृष्टि देख मुख सफेद हो गया, सियराने से लगे' । यहाँ विषयानुकूल वातावरण-सृष्टि के लिए हेतूत्प्रेक्षाओं, रूपकों आदि का सुष्टु प्रयोग है, यहाँ का डाकघर-रूपक भी अद्भुत है । जो लोग विश्वसनीय कल्पना को ही काव्य कहते है, यहाँ वह भी है,—पीपल सभय, विवर्ण, स्तब्ध और विपर्ण खड़े थे, शुक-सारिकाओं के क़बीले मौन हो गये, नभ-चढ़े सारस त्राहि-त्राहि पुकार रहे थे, सशोकश्वान मानवी कृतघ्नता पर रोने लगे और सविषाद वानरों के नेत्र गीले हो गये, गृध्र मनुष्यजाति को धिक्कारते हुए कहने लगे कि नर तो जंगली हत्यारा मात्र है और कुछ नहीं क्योंकि ये जिन्हें हम मनुष्य कहते आये हैं वक्र नागों से भी अधिक जहरीले हो गये हैं ! वर्तमान काल के महान् वैद्यराज आज़ाद पण्डित चन्द्रशेखर-जो लुक़मान की तरह अपनी एक अक्सीर गोली से अनाचार, अत्याचार, आततायिता और देश-द्रोह की लम्बी बीमारियों से ग्रसित लाइलाज मरीज़ों का भी सटीक इलाज कर देते थे, इसके लिये जिनकी छाया भी काफ़ी होती थी—आज इस स्थल पर कैसी वीर-मुद्रा में हैं । शीश से सुन्दर गङ्गा, बाहुओं से सिन्धु,-ब्रह्मपुत्र और वक्ष से नर्मदा निकलने लगी, विन्ध्य-सी कठोर कटि तोड़ रक्त की गोदावरी धरती पर दौड़ी और धरा-धुरी हिलने लगी । तभी सघन जघन-स्थली से कृष्णा उछलने लगी और कावेरी पगधूलि धोती सी लगी, चारों ओर रक्त ऐसा फैलने लगा कि देश की अखण्ड तस्वीर ढलने लगी' । सीतारामात्मज चन्द्रशेखर मातृभूमि के लिए आज़ाद बने स्वशस्त्र-बाणारूढ़ हुए स्वर्ग चले गये—परदेशी-शासन-दहन को बग़ावत की ऐसी कौन आग जो लगाई वीर ने नहीं, दीन, दलितों के हित-चिन्तन में ऐसी कौन रात जाग-जाग जो विताई वीर ने नहीं' हमारे महायुग का इतिहास तैंतालीस लाख-बीस-हज़ार वर्ष का

है जिसे हमीं से सभ्यता की वर्णमाला सीखने वालों और उनके ग़ुलाम अनुयायियों ने केवल कुछ हजार वर्षों का नाप-नाम लेकर काफ़ी समय से इसे छोटा करके दिखाने का दुरभियान छेड़ा हुआ है। हमारे नैतिक अधःपतन का इतिहास महाभारत-काल से शुरू होता है और हमारे ही कर्मों से पराकाष्ठा की ओर इस पतन और महापतन की प्रगति जारी है और हम अपने को बराबर प्रगति और आधुनिकता का ठेकेदार कहते चल रहे हैं; विज्ञान आविष्कारात्मक प्रगति करता है, राजनीति के नाम पर कुटिलनीति उसे दुर्गति में बदलकर जीवन-मूल्यों का उपहास करतो है। धर्म कहीं नहीं है, जाति भी कहीं नहीं है पर हमारे यहाँ की विघटनकारिणी राजनीतिकता की वार्त्तमानिक तथाकथिता धर्मनिरपेक्षता का लज्जा-परिहारी पाखण्ड आत्मवत् सर्वभूतेषु और आत्मोन्नयन के बजाय धर्म और जाति के नाम पर अज्ञानियों दुर्ज्ञानियों को दिनरात लड़वाकर बिल्ली-बन्दर-न्याय-बाँट की उक्ति चरितार्थ कर रहा है। विवाद-केन्द्र बना दी गयीं रामदीवारों को किन्हीं लोगों ने गिरा लिया, भावना का उपहास करते धरती-आसमान एक कर दिया यह जानते हुए भी कि इतिहास में यह सब होता रहता है। सात-सौ-वर्ष-पुराने इस्लामी शासन के बाद स्पेनिश पेनिन्सुला में जब ईसाई सत्ता में आये, अकेले कार्डोबा में लगभग पाँच सौ मसीतें जिनमें मक्का-महामसीत से रश्क करने वाली मेज्क्विटा की भव्य मसीत भी शामिल थी, ढहा दी गयी और कुछ न हुआ। पर हमारे यहाँ सब कुछ हो रहा है। आज स्थिति यह है कि महान् भारत को सत्तासक्त किन्नरों ने थान जैसा लत्ता-लत्ता कर डाला है, यौवनलखन विषयों में लवलीन और लवकुश का भविष्य अन्धकार-घिरा है, शूर्पणखाओं का बोलबाला देखकर हर सीता-सावित्री का मन हीनभावनाऽधीन है, दश-मुख भ्रष्टाचार के समक्ष निरुपाय और बेचारा राम-आदमी दीन, हीन हो रहा है, खरदूषणी प्रदूषणो से हेम-मृगी खिन्न हैं और वासना से क्लिन्न

जनमानस मलीन हो रहा है।' बात दरअसल यह हुई कि धर्मात्मा राजा हर्षवर्द्धन के बाद हमारे रहे-सहे जीवन-मूल्य भी समाप्त हो चले। आर्यावर्त्तउर्फ भारतवर्ष यूनानियों आदि के दुराक्रमणों से उबर कर अरबों, तुर्कों, मुगलों तथा योरोपियन्स का शताब्दियों तक ग़ुलाम बना रहकर स्वास्तित्त्व के लिए एक बार फिर जागरूक हुआ और काफ़ी समय छिन्न-तन होता आया यह अब तक बचता रहा महादेश एक दल बनाकर विदेशी शासन से अपने लिये उत्तरोत्तर अधिकाधिक अधिकारों की मॉग के रूप में स्वतन्त्रताऽभिमुख पुरश्चरणी होता दिखा। चाणक्य, महाराणाप्रताप और छत्रपति शिवाजी की परम्पराओं में हुई १८५७ की षोडशीरानी लक्ष्मीबाई के बाद बने इस दल में अच्छे से अच्छे नेतृत्व का उदय हुआ जो हिंसावादी न होते हुए भी विचारों में सर्वथा अहिंसावादी भी नही हो सकता था। आरम्भिक दिनों से १९४७ तक के भारत-रूस सम्बन्धों से सन्दर्भित अभिलेख-सङ्ग्रह-परियोज़ना-संलग्नाविदुषी डॉ० टाटियाना ज़गोर्दनिकोवा के अनुसार रूस के पुराऽभिलेखीय साक्ष्यानुसार गणेशोपासक बालगङ्गाधर तिलक ने भी एक बार भारतीय क्रान्तिकारियों के सैन्य-प्रशिक्षण के लिये सहायतार्थ बम्बई में रूसी वाणिज्य-दूत से भेंट की थी। सच्चरित्र युवाशक्ति इनसे मन से प्रभावित थी पर ऐसे नेतृत्व की उपेक्षा होकर नेतृत्व अहिंसावादियों के हाथ आ गया। जीवमात्र के तन और मन को बिना किसी बड़े और सर्वजनहितीय कारण के दुःखाना हिंसा और सामान्य कारण एवम् व्यक्तीच्छा के होते भी किसी को दुःखी न करना अहिंसा है पर जब हमे आततायी रण के लिए प्रचारे तब चाहे काल हो हमें सुखेन युद्ध करना चाहिए—सामाजिकों का यही धर्म है और यही आर्यदर्शन! उन लोगों के संस्कारानुसार एक अँग्रेजी कहावत है कि ईमानदारी सबसे अच्छी तरकीब है, इसी तरह भय से या इसे तरकीब के रूप में इस्तेमाल किया जाय तब यह अहिंसा नहीं कुछ और ही है।

कपिलवस्तु के सिद्धार्थ की अहिसा दु:ख या मृत्यु के भय से थी। क्रान्तिद्रष्टा अलग पड़ गये, क़ुरबानियाँ देते रहे और समझौता-वादी अहिंसावादी नेताओं की नीति सफल होती दिखी और उस समय के वर्तमान में ही अपना महत्त्वाकाङ्क्षी भविष्य देखने वालों ने भीष्मपितामहिक और धृतराष्ट्रीय आन्तरिक भावना में खण्डित भारतवर्ष सब दिन के विग्रह के लिए स्वीकार कर दु:शासनों की अखण्ड परम्परा क़ायम कर दी। विडम्बना यह भी कि बँटवारे का जो आधार बनाया गया, उसे माना कभी नहीं गया। अहिसावादियों के उत्तराधिकारी दूसरों के लिए एक बग़ल में संविधान दबाये और दूसरों के लिए ही एक बग़ल में धर्मशास्त्र दबाये अपनी संघ्राण-शक्ति का परिचय देते क़लाक़न्द के ढेर पर पञ्जे गड़ाये बैठ गये। देश के कृत्रिम विभाजन में असंख्य आबाल-वृद्ध-नर-नारी हताहत और बेघरबार हुए और पढ़ाया यह गया कि आज़ादी बिना खड्ग और ढाल के मिल गयी। सब जानते हैं कि दुनिया में सब जगह उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध हवा चली और हमारी स्वतन्त्रता के मूल में क्रान्तिकारी देशभक्तों के बलिदान ही कारगर थे, बर-तानवी क्रूर हुकूमत की नींव हिल चुकी थी। यह तो वैसा था जैसे कोई पेड़ पर चढ़कर आम तोड़े और नीचे खड़ा आदमी गिरते आम को गपच ले और कहे,–हमने इसे अपनी नीति से बड़ी आसानी से तोड़ लिया। यह इतिहास है और इतिहास को साहित्य और साहित्येतिहास अपने ढँग से कहते हैं जो अपनी सम्भाव्यता और सम्वाद की अहीनता में विश्वसनीय होकर श्रेयस्कर होता है। अवस्थी जी ने लिखा है–पराधीनता-तमस-ध्वंस-पटु सूर्यवंशी क्रान्तिकारियों के अभियान और शहीदों के बलिदान को हम भूल गये, देश-प्रेम के ज्वलन्त प्रेरकों को विस्मृत कर स्वमहिमाबखान को वरीयता दी जाने लगी। सब राज-नीतिज्ञ हो गये, अपराधी केवल वह रहा जो राजनीति में असफल रहा। दाये, बायें रहने वाले कुछ सच्चों, कुछ झूठों को

स्वतन्त्रता-संग्राम-सेनानियों वाली पेन्शन भी मिली, हम नहीं जानते कि जगरानी को कब मिली पर अल्फ़र्डपार्क वाले मुख़बिर को तो ज़रूर मिली ! चन्द्रशेखर आज़ाद शिवपुरुष थे । शैवागमों का अभिमत है कि प्रलयध्वंस में रव करने वाले रुद्र ही कालान्तर में शिवरूप हो गये । शैवदर्शन के दो उपभेदों स्पन्द और प्रत्यभिज्ञा में ईश्वर-प्रत्यभिज्ञा को ही विचारकों का विशेष प्रश्रय मिला है, ईश्वराद्वयी अद्वैत, ईश्वरीप्रत्यभिज्ञा, तदाद्याचार्य उत्पल के व्याख्यान में ईश्वर-रूप अपनी ही अभिज्ञा-पहचान या पुनः पहचान है । सत्कर्मात्मा व्यक्तित्व की विनिर्मिति इसी मानस-दर्शन से होती है, ऐसा व्यक्ति किसी भी अन्याय का आमूलोच्छेदकारी लक्ष्य रखता है और इसकी कोई निजेप्सा नहीं होती, इसके लिए अनय-विरुद्ध कोई भी ऐश्वर्य-सत्ता ललकारने योग्य होती है । आग्रायण, औदुम्बरायण, और्णनाभ, कात्थक्य, आपिशलि और काशकृत्स्न जैसे तत्पूर्व वाण्याचार्यों का तो अधिक उल्लेख नहीं मिलता पर इन महान् भाषा-पुरुषों के समवेत उपाध्ययित सुपरिणाम और वेदों की देवभाषा को संसार का प्रथम सर्वमान्य व्याकरण देकर संस्कार-युक्त संस्कृत नामाभिधान-विधानकर्ता आरम्भ में जड़-बुद्धि शालातुरीयशालङ्क-पाणिनि ने अइउणादि सूत्र स्वपूज्याचार्य वर्ष के निर्देशन में शाङ्करस्तवन से सिद्ध पाये थे । अष्टाध्यायी को ही कुमुदित करने के लिए भट्टोजिदीक्षित ने सिद्धान्त-कौमुदी बनाई, इतनी वैशद्य-पूर्ण कि पूर्व-माहेश्वरी-कृति के स्थान पर लोक इसी नाम से परिचित होने लगा जिसे और अधिक कुमुदित करने के लिए आचार्यवरद ने सार, मध्य और लघु तीन संस्करण बनाये फिर पूर्व दोनों को भूलकर सुधी-जन-सङ्कुल लोक अब तक लघु-सिद्धान्त-कौमुदी का नाम ही मौख्येन जानता है—वर्ष, पाणिनि, भट्टोजि, वरद और पूर्वोल्लेखित सिद्धाचार्यगण भी शिवताऽभि-सम्पृक्त सिद्धपुरुष हुए हैं और वैसी ही उनकी वाणी-लेखनी भी है,–अष्टाध्यायी', सिद्धान्तकौमुदी', लघुसिद्धान्तकौमुदी'–ये सिद्ध-

वाणीग्रन्थ होने से सनिष्ठ अध्येता को अलौकिक मेधा-कर्म-संसिद्धि प्रदान करने वाले होते हैं, पवित्र मन इनसे अभिमन्त्रित हो उठता है। सीताराम के चन्द्रशेखर ने जीवन में अध्ययन के नाम पर काशी में सुकेवला लघुसिद्धान्तकौमुदी का ही अध्ययन किया था। प्रलयध्वंसरवकारी किन्हीं अर्थों में वह साक्षाच्छिवावतार थे,-जैसे हनुमत् साक्षाच्छिवावतार हुए सात चिरञ्जीवियों में एक हैं। चन्द्रशेखर भी चिरञ्जीवी हैं और प्रत्यभिज्ञाऽभिबोधी युद्ध, दया, दान, धर्म, सत्य और कर्म के वीर हैं। काव्यशास्त्र वीर-रस का वर्ण स्वर्ण और देवता इन्द्र को बताता है, वीर में रक्त-वर्णरौद्र रुद्र-देव-वशे अन्तर्भुक्त रहता है, कपोत-वर्ण और यम-दैवत करुण की उत्पत्ति रौद्र से बतायी गयी है–रौद्रात्तु करुणो-रसः। इस प्रकार स्वर्णेन्द्र-रक्तरुद्र-कपोत-यम के सामञ्जस्य का नाम चन्द्रशेखर अर्थात् बहुव्रीहि से शिव है। महाकालेश्वर-शिवार्चन से गर्भाधान और गौरशिवप्रिय चन्द्रमा के दिन, शिव-मास श्रावण में ही जन्म और मातृमिलन उनकी कर्मप्रत्यञ्चा से आश्चर्य–(अद्भुत)–रस की सृष्टि करने वाला है। साहित्य-दर्पण' में नारायणपण्डित का उल्लेख है जो पीतवर्ण आश्चर्य को देवता ब्रह्मा के अधीन एकमात्र रस मानते हैं, शक्तिभद्र ने इसी मान्यता को प्रमाणीकृतकरणार्थ 'आश्चर्यचूडामणि' नामक नाटक लिखा, चन्द्रशेखर वस्तुतः शिवरूपाश्चर्यचूडामणि हैं, इस विलक्षणतामयी शिवता के धर्मपाल श्री अवस्थी ने लिखा,–मानो कुचालकों के भव-भाव हरने को भुवन-भवन में भव प्रकट हुआ हो, बाल चन्द्रभाल है कि अगिया-वैताल है कि अंजनी का लाल है कि काल विकराल है" और यह भी कि "नाम-अनुरूप जिये जीवन सदैव रहे शिव के समान ही शिवत्व के प्रवाह में" क्रान्तिकारियों में रौशनसिंह, अश्फ़ाक़उल्लाह ख़ाँ, सुखदेव, राज-गुरु, रामप्रसादबिस्मिल, भगतसिंह तथा अन्यानेक–एक से एक बड़े महारथी थे, जो जानते थे कि सम्भवतः आज़ादी उनके जीवन से दूर हो पर यह भलीभाँति जानते थे कि स्वतन्त्रता-लता

सदैव शोणिताभिषेक से ही पल्लवित होती है, आज़ाद अकेले एक आज़ादहिन्दफ़ौज थे जिनके शिवत्त्व के प्राणानुभाव में देशभक्ति-पूर्ण यह काव्य रचा गया है, ईसा की बीसवीं शताब्दी के एक भव्य क्रान्तिमन्दिर की परिकल्पना की जाय तो वहाँ क्रान्ति-महारथी' के छन्द उत्कीर्ण किये जाने योग्य होंगे, उसमें सबसे भव्य प्रतिमा यज्ञोपवीत, धोती, मूँछ, माउज़र-धारी चन्द्रशेखर आज़ाद की होगी और उसका दैवी स्वरूप कुछ इस प्रकार से होगा "मस्तक विशालनभ, चन्दनतिलकचन्द्र नैनसालिपुण्डरीक-से विराजमान" हैं, "कीर्त्तिगढ़-गुम्बद पै कनकशिखरनाक, रेख-वक्र शौर्य के प्रतीक दो कृपाण" हैं, उन्नत प्रशस्तदृढ़वक्ष, बलि-वर्दस्कन्ध, भुजदण्ड दो वितुण्ड-शुण्ड के समान" हैं, केहरि-कमर दोनों जंघाये मकरपृष्ठ, मीन ज्यों पिण्डलियों के मध्य गतिमान' हैं ! इस देवालय का कीर्त्तन-सम्पुट होगा कि—अन्याय-अनीति पर आधारित व्यवस्था में सत्तापरिवर्तन कभी अहिंसा से नही होता, इसके लिए बलिदान जरूरी होते हैं। कवि सम्मेलनों के क्रान्तिरंगराजा दिवम्प्राप्त ठाकुर बलवीर सिंह रंग की यह पंक्ति-युग्मिता कि '(•••पर) निराश होने की कोई बात नहीं है साथियो ! क्रान्ति-पर्व के उद्‌घाटन का उत्सव बहुत क़रीब है ॥' —ईमान न बेंचने वाले सांसिद्धकों की अनिर्वात अन्तराभा होगी। और इस मन्दिर की सबसे पुख़्ता नीव क्रान्तिमहारथी' है। काव्य-क्रान्ति का महारथी साहित्येतिहास में स्वानामाधिकारी होगा क्योंकि साहित्य-सम्पूज्य आचार्य शुक्ल की शब्दावलि उधार लें तो "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का सञ्चित प्रतिबिम्ब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अन्त तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य-परम्परा के साथ उनका सामञ्जस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कह-लाता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामा-

जिक, साम्प्रदायिक या धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है। अतः कारणस्वरूप इन परिस्थितियों का किञ्चित् दिग्दर्शन-भी साथ ही साथ आवश्यक होता है"। धर्मपाल अवस्थी कवियों की उस श्रेणी में आते हैं जिसे चंद, केशव, मान, लाल, मैथिलीशरण, माखनलाल, सनेही, निराला, नवीन, सुभद्रा, अनूप, दिनकर, रूपनारायण, आनन्द, अनीस जैसे कवियों ने अलङ्कृत किया है। यह उक्ति केवल कविता के धर्मविशेष के सम्बन्ध में है परन्तु उनके, क्रान्ति-महारथी' को काव्य-धर्म की दृष्टि से शिवाबावनी' और हल्दीघाटी' की परम्परा में लिया जा सकता है शिवराजभूषण' बड़ा ग्रन्थ है पर वह तद्युगानुरूप मुख्यतः अलङ्कारग्रन्थ है। राणा के सामने अकबर था, शिवा के सामने औरंगजेब और चन्द्रशेखर के सामने अँग्रेज, तीनों युग्मों में अलग-अलग देखिये कि प्रणम्य कौन है। और इसी अनुपात मे इनके कवि भी,–गहराइयों को जनमानस की गहराइयों तक, ऊँचाइयों को जनमानस की ऊँचाइयों तक पहुँचाने वाला कवि महान् होता है, यह कवित्रय इसी कोटि का है, अवस्थी जी की क्व्यावस्था अभिज्ञ काव्यार्थाभिनिवेशियों के लिए अनस्पष्टतर है।

...सेवकवात्स्यायन

वार्हस्पत्यवासरीयाश्रीरामनवमी–

२०५३–विक्रमाब्द

एफ्–१३, किदवईनगर, कानपुर–११

फोन–२७३१७९

अनुक्रमणिका

अथ

क्रान्ति-महारथी

प्रबन्ध-काव्यम्

प्रणाम

१

सुरसरि के समान मुक्तिदायिनी[1] विचार-
धारा थी विराजमान बुद्धि के सदन में।
शान्त शुद्ध शीतल विवेक-चन्द्रमा से मन
सतत निरत भव - बन्धन - कदन में।
वसुधा को मुक्ति की सुधा प्रदान करने को
आगे आगे रहे मृत्यु-विष के वरण में।
हरने कुचालकों के भव-भाव मानो भव[2]
प्रगट हुआ हो फिर भुवन - भवन में॥

1. मोक्ष देने वाली, स्वतन्त्रता प्रदान करने वाली, 2. शंकर

२

वटु-वेश में भी रज उमा-मुख-कंज की थी
प्रिय सर्वदाही त्रिनयन की निगाह में।
ये भी सर्वदा ही पटु वटु रहे देश हित
'रज उमा' - आखर-विलोम[1] की सुछाँह में।
अंगरेजी सत्ता - शिवा[2] के अहेरी सर्वहर
अघर अनघ निर्विकल्प[3] मुक्ति - राह में।
नाम - अनुरूप जिये जीवन सदैव, रहे
शिव के समान ही शिवत्व के प्रवाह में॥

३

बल-बुद्धि-साहस-स्वदेश - भक्ति के प्रतीक
आजादी के उग्र अग्रदूत को प्रणाम है।
मुक्ति-अनुरागी, भोग-वासना-विरागी, सुख-
दुख में निसंग अवधूत[4] को प्रणाम है।
देशहित देह त्यागने का मन में हुलास
मृत्यु-भय से अनभिभूत[5] को प्रणाम है।
माता-पिता के प्रभूत पुण्य से प्रसूत क्रान्ति-
स्यन्दन[6] के सूत से सपूत को प्रणाम है॥

---

1. माउजर 2. शृगाली, 3. अपरिवर्तित, स्थिर
4. संन्यासी 5. वशीभूत न होने वाला 6. रथ

४

भूले हम पराधीनता - तमस - ध्वंस - पटु
सूर्यवंशी क्रान्तिकारियों के एहसान को।
'हमको स्वतंत्रता मिली है बिना खड्ग-ढाल'
कह के भुलाया शहीदों के बलिदान को।
बिसरा के देश-प्रेम के ज्वलंत प्रेरकों को
दी गई वरीयता स्वमहिमा-बखान को।
सत्तासक्त किन्नरों[1] ने लत्ता-लत्ता कर डाला
अलबत्ता थान जैसे भारत महान को।।

५

लव-कुश का भविष्य अंधकार से घिरा है
यौवन - लखन विषयों में लवलीन है।
सूपनखाओं का बोलबाला लख हर सीता-
सावित्री का मन हीन-भावना-अधीन है।
दशमुख-भ्रष्टाचार के समक्ष निरुपाय
राम-आम-आदमी बिचारा दीन-हीन है।
खरदूषणी प्रदूषणों से खिन्न हेममृगी
वासना से क्लिन्न जन-मानस मलीन है।

1. गंधर्वों, कुपुरुषों

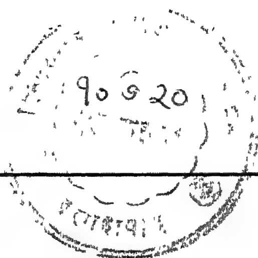
६

मजहब-सूबा-जाति आदि से बड़ा है देश,
व्यक्ति-व्यक्ति में हो दृढ़ धारणा, जरूरी है।
'बलिदान-व्यष्टि का समष्टि हेतु पुण्य-कर्म'
होनी हर मन में ये भावना जरूरी है।
देश को विनाश से बचाने हेतु वर्तमान
और भावी नस्ल को सँवारना जरूरी है।
देशभक्त क्रान्तिकारी महापुरुषों के प्रति
भावना कृतज्ञता की जागना जरूरी है॥

७

इसीलिये सौंप दिये तन-मन-धन-प्राण
जिन्होंने स्वतन्त्रता-वितान तानते हुए।
कूद पड़े मुक्ति-यज्ञ-कुण्ड में पवित्र होम–
द्रव्य[1] के समान, परिणाम जानते हुए।
रक्त-मसि से लिखा ज्वलंत इतिहास एक
बलिदानी आन की उठान ठानते हुए।
खींचने चला हूँ शब्द-चित्र उनके विचित्र
जीवन-चरित्र के स्वधर्म मानते हुए।

1. हवन-सामग्री



८

उन्नाव जिले में स्थित गाँव गंगा के किनारे
जानते हैं लोग जिसे बदरका नाम से।
रहने लगे थे यहाँ सीताराम जी तिवारी
आके कानपूर-निकटस्थ भौंती ग्राम से।
त्रस्त होके दुरभिक्ष से उन्नीसवीं सदी के
अन्त में निकल पड़े अपने मुकाम से।
बेहद गरीबी में भी छोड़ा न ईमान कभी
मतलब रखा न हराम की छदाम से॥

९

आये सीताराम धर्मजाया जगरानी और
पुत्र सुखदेव साथ मालवा प्रदेश में।
जा बसे वे ग्राम भावरा में झाबुआ जिले के
झोपड़ी बना के कोल-भील-प्रतिवेश में।
शिष्ट धर्मनिष्ठ विप्र में थी सन्निविष्ट भक्ति-
भावना विशिष्ट देव-देव त्र्यंबकेश[1] में।
सत्यशील पंडित अखंडित-चरित्र मान-
मंडित रहे सदैव पूरे परिवेश में॥



1. शंकर

उदय

१०

गरज रहे थे घन - गहन गगन बीच
शस्य-स्यामला धरा अतीव थी उमंग में ।
स्वस्ति-पाठ में निरत दादुर समाज, गीत-
मंगल के गाते पिक-चातक थे संग में ।
श्रावण सुदी द्वितीया दिन सोमवार शुभ-
चन्द्र-राशि-कर्क-मध्य दीपित पतंग में ।
दे के कुलदीपक को जन्म जगरानी माँ के
मेला सा लगा था खुशियों का अंतरंग में ।।

११

बस में अगर होता, आनंदातिरेक में वो
कर देतीं सम्पदा निछावर कुबेर की।
हृदय विशाल किन्तु वैभव नगण्य दे के
क्रूर विधि-वाम ने थी अक्षम अँधेर की।
आमदनी पाँच रुपये थी प्रतिमाह सिर्फ,
उच्चता थी पति के चरित्र में सुमेर की।
अर्थ की विपन्नता के कारण झुके नहीं वे
सामने किसी के, जिन्दगी जिये दिलेर की।।

१२

चार पुत्रों को जनम दे चुकी थीं जगरानी
तीन हुए लीन गाल में अकाल काल के।
दिल में ललक तब जागी सुनने को प्रिय
तोतले मधुर बोल एक और लाल के।
किये उपवास मिल पति-पतिनी ने, पूजे
प्रतिदिन विग्रह बना के महाकाल के।
रखा सुत-नाम 'चन्द्रशेखर' पिता ने, उसे
मान वरदान का सुफल चन्द्रभाल के।।

१३

शुक्लपक्ष में हुआ था जन्म माँ के लाडले का
चन्द्रमा सा वह दिनोदिन बढ़ने लगा।
काजल-कलंक[1]-लग्न बाल-वदनेन्दु पूर्ण-
चन्द्र-सुषमा को शर्मसार करने लगा।
घुटनों के बल चल, बोली तोतली सी बोल,
शैशवी क्रियाओं से वो मन हरने लगा।
अनिमित्त[2] हास्य, उनमुक्त किलकारियों से
माँ के मन अमित प्रमोद भरने लगा ॥

१४

कुछ दिन बाद लाँघ देहरी, सहन पार-
जाके गलियारों में विहार करने लगा।
आयु में समान बालवृन्द-साथ खेल-कूद
नित्य नव-लीला का प्रचार करने लगा।
भील-बालकों को निज श्रेष्ठता का दे प्रमाण
अपने प्रभाव का प्रसार करने लगा।
तीरंदाजी में प्रवीण, जाके नित्य जंगलों में
हिंस्र पशुओं का भी शिकार करने लगा।

1. काजल का टीका
2. अकारण

१५

पूरी हुई प्राथमिक पाठशाला की पढ़ाई
किन्तु मन पढ़ने में था कभी रमा नहीं ।
कुछ दिन अलीराजपुर तहसील में की,
नौकरी, मगर दास्यकर्म भी जमा नहीं ।
हर वक्त हाँ हुजूरी, झुक के सलाम, खोल
सकते अनीति के विरोध में जुबाँ नहीं ।
क्या क्या सोचा करता था बैठ के अकेले वह,
वो ही जानता था, कोई और राजदाँ नहीं ।।

१६

पंख लगते ही बन जाते स्वावलम्बी खग
होती न जरूरी किसी की भी जी हुजूरी है ।
खेलें खाएँ जैसे जहाँ चाहें उड़ें साथ-साथ
कोई प्रतिबन्ध है, न कोई मजबूरी है ।
विधि-निषेधों के जाल में फँसी मनुष्ययोनि
नाहक ही पाले श्रेष्ठता की मगरूरी है ।
यहाँ तो हमेशा 'ऐसा करो, वैसा मत करो'
'करो न करो' में बँधे रहना जरूरी है ।।

१७

निज -कल्पनानुसार भरी जा सके उड़ान
ऐसा उनमुक्त आसमान चाहता था वो ।
मनचाही छूने को बुलन्दी जिन्दगी में नहीं
लेना किसी का भी एहसान चाहता था वो ।
गतानुगतिक-वृत्ति छोड़ स्वविवेक द्वारा
संचालित जीवन-विधान चाहता था वो ।
पग-पग पर प्रतिबन्ध हों लगे जहाँ पै
ऐसी दुनियाँ से पाना त्राण चाहता था वो ।।

१८

आया एक व्यवसायी बम्बई से, बेचता था
मोती घूम-घूम रोजी-रोटियाँ कमाने को ।
हाल सुन बम्बई का रोचक, मचल उठा
शेखर का मन मायानगरी में जाने को ।
तड़प रहा था मन भावरा के अतिरिक्त
जग की विचित्रता का परिचय पाने को ।
अस्तु चल दिया चुपचाप सर्वदा के लिये
मनचाही यायावर जिन्दगी बिताने को ।।

१६

शेखर था दंग देख-देख दौड़-भाग, शोर,
चहल-पहल, भीड़ बम्बई शहर की ।
चारों ओर बहुमंजिले भवन भवनों, में
चकाचौंध बिजली की जगर-मगर की ।
देखी सकुतूहल विविध वाहनों की भीड़
और अंतहीन शोभा डामरी डगर की ।
छोटी बड़ी नावें, सुविशाल जलयान मानो
सागर में खेल रही संतति सगर की ।।

२०

दो दिनों के बाद जेब दे गई जवाब तभी
उदरदरी के नखरे अखरने लगे ।
नीरस हुई उछल कूद जल-वीचियों की
पेट में उछलकूद चूहे करने लगे ।
जीविका कमाने हेतु सहरंगसाज बने
जलयान रंगने में दिन टलने लगे ।
सपने सजा के आया था जो बम्बई में वीर
शीघ्र ही निराशा में ढले, बिखरने लगे ।।

२१

यही है क्या बम्बई शहर ! दीखती है जहाँ
मनुज - मनुज - बीच घोर असमानता ।
कुछ को अजीर्ण, फाँकते हैं हाजमे का चूर्ण,
और कोई भूखा जूठे पत्तलों को चाटता ।
कहीं तन ढकने को चीथड़ों का भी अकाल
कहीं परदों के रूप में प्रयुक्त बाफता ।
कहीं नारकीय जिन्दगी का अभिशाप कहीं
वैभव विलोक स्वर्गलोक भी उसाँसता ।।

२२

देवों-किन्नरों का अप्सराओं का महानगर
आदमी गरीब यहाँ भला किस काम का ।
होटलों क्लबों में मधुपान का मुकाम यह
ठाट-बाट वालों का नगर टिमटाम का ।
चाँदी काटते हैं चोर और जमाखोर यहाँ
जी रहा श्रमिक वर्ग जीवन गुलाम का ।
ऐसी नगरी में आम आदमी का काम क्या है,
जमता हो रंग जाम-संग जहाँ शाम का ।।

२३

सप्ताह में रविवार को नहाना एक बार
जनपथ के किनारे सरकारी नल पै।
दिनभर काम, खाना होटलों में और चल-
चित्र देखना सिनेमाघर के पटल पै।
थक के निढाल होके नींद सताने पै सोना
बीड़ी के धुएँ से भरे सीले भूमितल पै।
'क्या इसी के लिये आया था मैं बम्बई शहर ?'
खेद होने लगा उसे अपनी अकल पै।।

२४

भावरा अगर जाता हूँ तो अवकाश दूँगा
परिचितों, स्वजनों को परिहास के लिये।
यहाँ रह के महज कब्र खोदता रहूँगा
नित्य अपने मनोरथों की लाश के लिये।
सार चिर-चिन्तन के बाद निकला कि पढ़ो
सत्वर प्रगति बुद्धि के विकास के लिये।
अस्तु अध्ययन हेतु छोड़ी बम्बई, पधारे
वीर गंगतीर काशी में प्रवास के लिये।।

२५

पाठशाला में प्रवेश लिया, लघुकौमुदी का
विधिवत पाठन - पठन हो गया शुरू ।
सक्तुत अशन, गंग - संतरण, संयमित–
जीवन से बदन - गठन हो गया शुरू ।
अखबार पढ़ने से जागी चेतना नवीन
देशहित चिन्तन - मनन हो गया शुरू ।
क्रान्तियज्ञ के प्रकाण्ड कर्मकाण्ड-ज्ञान हेतु
जतन अकाण्ड ही गहन हो गया शुरू ॥



२६

गान्धी की असहयोग-आंधी से समग्र देश
चेतना से युक्त था, विचित्र हलचल थी।
मानो फूटने को व्यग्र सुप्त ज्वालामुखी, जन–
गण-मन में अजीब उथल-पुथल थी।

चालू था दमनचक्र, भरे जा रहे थे जेल,
किन्तु सत्याग्रहियों की निष्ठा अविचल थी।
कहीं जनसभा, कहीं मंत्रणा, कहीं जलूस,
जन-जागरण की क्रिया यों अविरल थी॥

२७

काशीनगरी भी थी अछूती नहीं उन दिनों
देशव्यापी जन - जागरण की उमंग से ।
एक दिन सत्याग्रह के निमित्त शेखर भी
निकल पड़े विवश मन की तरंग से ।
शासन उतारू था दलन को सदलबल
आंदोलन जोर - जुल्म वाले रंग-ढंग से ।
लाठी बरसाती आई पुलिस, निरपराध
सत्याग्रही मार सहने लगे अपंग से ॥

२८

बिना प्रतिकार किये हर सत्याग्रही बोल-
बोल 'जयगान्धी' बेंतमार सहने लगा ।
किन्तु लहूलाल में उठा उबाल, जगरानी–
लाल का हृदय-अन्तराल दहने लगा ।
अत्याचारियों के जोर-जुल्म का विरोध जो भी
हो सके करो, नृसिंह-बाल कहने लगा ।
झटके से छोड़ा एक रोड़ा खून भोंड़ा थोड़ा–
थोड़ा सिपाही के चेहरे से बहने लगा ॥

२६

कैद कर लाए गये खरेघाट के समक्ष
था जो मजिस्ट्रेट सिद्ध क्रूरता दिखाने में।
पूँछा उसने कि नाम ? बोले 'है आजाद' और
काम ? 'मजदूरी आजादी के कारख़ाने में।'
झुँझला के बोला 'नाम पिता का बताओ' वीर
ने कहा, 'स्वतंत्र कहलाते हैं जमाने में।'
हुआ जल-भुन के कवाब, सुनके जवाब
पूँछा 'रहते कहाँ' ? बताया 'जेलखाने में' ।।

३०

खरेघाट को किया अवाक, वीर तेजपुंज
शेखर की निडर निशंक लाग - डाँट ने।
तेजतर हाजिर जवाबी से हो तेजोहत
पूर्व फैसले के लगा होठ वह काटने।
तमतमा गया, हो गया विवेक शून्य मानो
ग्रस लिया शेखर के व्यक्तित्व विराट ने।
पंचदश बेतों का दिया कठोर दण्ड दुष्ट
शासकों के खास खैरखाह खरे घाट ने ।।

३१

जेलर के रूप में विराजता था उन दिनों
एक गण्डासिंह सरदार कारागार में।
नाम सुनते ही रूह काँपती थी कैदियों की,
क्रूर करता था कदाचार कारागार में।

वीर के पहुँचने से पहले पहुँच गया
नोंक - झोंक वाला समाचार कारागार में।
गण्डासिंह सुनके हँसा, कहा स्वमन में कि
आने दो, करूँगा सतकार कारागार में॥

३२

एक मातहत से कहा कि थोड़ी देर बाद
शीत - ऋतु रंग दिखलाने लग जाएगी।
आज ओढ़ना-बिछौना इसको दिया न जाय,
अक्ल रात भर में ठिकाने लग जाएगी।

जैसे जैसे तन अकड़ेगा, मन की अकड़
दूर होगी, हेकड़ी भुलाने लग जाएगी।
बड़ों बड़ों को पिला चुका हूँ पानी, याद नानी-
थोड़ी देर में इसे भी आने लग जाएगी॥

३३

नभ से तुषारपात की समृद्धि साथ ले के
धीरे-धीरे शिशिर की रात बढ़ने लगी।
सारमेयी[1] निज नवजात शिशुओं के संग
घुग्घी मार के पयाल में कुकड़ने लगी।
कम बल हुआ कम्बलों का सरदी के मारे
बरफ - लपेटी सी रजाई लगने लगी।
शीत - भय - ग्रस्त श्वेत - वदन अँगारे हुए
थर - थर - थर लौ दिये की काँपने लगी ॥

३४

आधी रात बीते बड़े गर्व से चला वो दुष्ट
दशा देखने सशस्त्र क्रान्ति के नगीने की।
हिम-जड़-तन[2] ढीठ माँगेगा दया की भीख,
कुलक रही थी क्रूर कामना कमीने की।
किन्तु देखा हूँक-हूँक दण्ड पेलता था वीर
ड्योढ़ी हो चुकी थी तब तक नाप सीने की।
फरक रहे थे फर - फर - फर नासापुट[3]
झर - झर - झर वृष्टि हो रही पसीने की ॥

1. कुतिया
2. सर्दी से ठिठुरी देह वाला
3. नथुने

३५

दंग रह गया निर्दयी विचारने लगा कि
सामने का सत्य सत्य है कि इन्द्रजाल[1] है।
कहाँ यह उम्र और कहाँ ये असीम शक्ति
बाकमाल शौर्य का प्रतीक नौनिहाल है।
मन में उबाल, भरी तन में उछाल और
मुख पै जलाल[2], माँ का लाल बेमिसाल है।
बालचन्द्र भाल है कि अगिया बैताल है कि
अंजनी का लाल है कि काल विकराल है॥

३६

चाटु[3] वचनों को सुनने की आश ले के गण्डा
बोला व्यंग, बड़ी दण्ड पेलने की दम है ?
चक्की पिसवा के कल देखूँगा कि बाजुओं में
तेरी कहाँ तक श्रम झेलने की दम है।
वीर बोला, "पिंजड़े में बन्द शेर को न छेड़
दुष्ट ! तुझमें पिरे को पेरने की दम है।
दम देखने की दम तुझमें कहाँ रे ! ताला-
खोल, यदि मेरी दम देखने की दम है॥"

1. जादू 2. तेज 3. चापलूसी से भरे

३७

सुन के वचन ओजपूर्ण चकराया वह,
माथे से उभर पड़ा ज्वार श्रमजल[1] का ।
भोगा कभी ऐसा अपमान जिन्दगी में नहीं,
जागा प्रतिशोध[2], मन में मचा तहलका ।

बोला, 'नाक न रगड़वा ली तुझसे अगर,
मान लूँगा मैं भी बेटा नहीं हूँ असल का ।
दूध छठी का न याद करवा दिया तो मैं भी
गण्डासिंह नहीं, करो इन्तजार कल का ।'

३८

धमकी पै नैन हो गये अंगार, खौल उठा–
खून, भिँचीं मुट्ठियाँ नृसिंह मरदाने की ।
सीखचों से मजबूर था नहीं तो कर देता
तार-तार सारी शान जेलरी के बाने की ।

गरजा जो शेर बैरकों में मचा हड़कम्प
काँपीं प्रतिध्वनि से दीवारें जेलखाने की ।
सरपट भागा, हुआ रुतबा हिरन, खुली–
पोल मरदानगी की जेलर जनाने की ।।

1. पसीना 2. बदले की भावना

३९

मौन हो गई मुखर तूती रुतबे की मानो
वीर के प्रखर तेज के नकार - खाने में।
ध्वस्त हुआ रोब का बिजूखा[1] पस्त हुआ दर्प
स्रस्त[2] हुई शेखी सिर्फ जोर अजमाने में।
पराभव[3]-पीड़ा न सही गई तो रम गया
रम के नशे में निज मन भरमाने में।
भू पै औंधा होके गिरा, पी के मानो रहा नहीं
मुख दिखलाने के भी काबिल जमाने में।।

४०

दूसरे दिवस दण्ड देने हेतु टिकठी से
बाँधा गया वीर नियमों की हुई पालना।
बदले की भावना से युक्त क्रुद्ध गण्डासिंह
पास ही खड़ा था, भूला था न अवमानना।
दोनों जानते थे एक दूसरे का मनोभाव,
इसको समझना न उसको बखानना।
सत्तामद और स्वाभिमान में भिड़न्त आज
दोनों चाहते थे एक दूजे को निपाटना।।

1. पशु-पक्षियों को डराने के लिये खेतों में लकड़ी पर रखी काली हॉडी
2. शिथिल
3. अपमान

४१

रक्त बहता है, माँस - छीछड़े उछलते हैं,
खाल पहले ही बेंत में उधड़ आती है।
रोते हैं, कलपते हैं, नैन पथराते, प्राण—
दण्ड से अधिक वेत्रदण्ड प्राणघाती है।
रह जाती जान में न जान, जिस्म में बिचारी
जान की महज एक लाश रह जाती है।
सहने में छाती फट जाती वज्र की भी ऐसी
वेत्रदण्ड की अमानवीय परिपाटी है।।

४२

ठहर - ठहर पड़ता था एक - एक बंत
दृश्य देख धैर्य का भी धैर्य डोलने लगा।
आह की न ऊह की शिला सा अविचल वीर
साहस के अभिनव[1] पृष्ठ खोलने लगा।
बेंत-वज्र के प्रहार सहने के व्याज[2] मानो
अत्याचारियों को क्रूर शक्ति तोलने लगा।
साँस भर - भर झेलने लगा प्रहार, साँस
छोड़ने में वन्देमातरम् वो बोलने लगा।।

1. नये
2. बहाने

४३

वन्देमातरं का जयकारा सुन बार - बार
पारा क्रूर जेलर का चढ़ता चला गया।
असफल होते अपनी नृशंसता को देख
नख - शिख दहका, दहकता चला गया।
झुँझला के, बौखला के, मानो पगला के वह
बहक - बहक के बहकता चला गया।
जोर से लगाओ, और जोर से लगाओ, पूरे
जोर से लगाओ बेंत, बकता चला गया।।

४४

एक ओर बदला चुका रहा था गण्डासिंह
दे रहा था घोर यातनाभरी प्रतारणा।
एक ओर वीर-उर में अडिग निश्चय कि
प्राण जाते हों तो जाएँ, टेंक है निबाहना।
नर-केसरी का तन था लहूलुहान किन्तु
मन में न दैन्य था, न स्वर में उलाहना।
उग्रतर हुए ज्यों-ज्यों बेंत के प्रहार, उग्र-
तम होता गया जै - जैकार में दहाड़ना।।

४५

गण्डासिंह चाहता था, बोले त्राहि-त्राहि किन्तु
होती गर्जना थी हरबार वन्देमातरम् ।
गण्डासिंह चाहता था, चीखे हाय ! राम-राम
किन्तु उठती थी ललकार वन्देमातरम् ।
गण्डासिंह चाहता था, माँगे वो दया की भीख,
बदले में होती थी हुंकार वन्देमातरम् ।
गूँज उठा अनहद सा गगन - मण्डल में
मुक्ति[1]-सिद्धि-मंत्र बेमिहार[2] वन्देमातरम् ।।

४६

लज्जित खड़ा विफल काम गण्डासिंह मानो
अनुताप[3] - युक्त यमराज का सफीर था ।
भीति की निशा व्यतीत हो चुकी थी, मौन खग
मुखर हुए, चपल हो चला समीर था ।
वेत्रदण्ड की कसौटी पै कसा निखर उठा,
शत - प्रतिशत खरे कुन्दन सा वीर था ।
एक लघुतारा दिनकर सा दमक उठा,
स्वागत को सारा काशीनगर अधीर था ।।

1. आजादी मोक्ष, निरंकुश 3. पश्चाताप

४७

आयोजित हुई सभा वीर - अभिनन्दनार्थ,
करने को जाहिर विरोध सरकार से।
भीड़ का अपार पारावार लहरा रहा था,
हो रहे थे गुंजित दिगन्त जै-जैकार से।
नेह - भरे सुमनों के भार से झुकाए शीश
ढक गया वीर पुष्पहारों के उभार से।
वेत्रदण्ड की तमाम वेदना विलीन हुई,
जन-जन की सहानुभूति और प्यार से॥

४८

पुर-ललनाएँ छतों छज्जों पै विराजें, उर
जिनके भरे अकूत[1] कौतुक[2] - कलक[3] से।
चाहें बोलने को नेह - सने अनमोल बोल,
निकल न पाते गह - गहे[4] से हलक से।
झलक विलोकने की मन में ललक मानो
सुरललनाएँ झाँकने लगीं फलक[5] से।
करके पवित्र, रज - राजस छुड़ाइ, देखें
धोइ-धोइ दृष्टि अश्रुजल की छलक से॥



1. अपरिमित 2. आश्चर्य 3. बेचैनी
4. गदगद 5. आकाश

महन्त

४६

शान्ति से न होगा कुछ, पानी है स्वतन्त्रता तो
इस देश में सशस्त्र क्रान्ति लानी चाहिये।
दुष्ट अँगरेज - सरकार से अहिंसा नहीं,
हिंसा के सहारे जंग छेड़ी जानी चाहिए।
माला मृगछाला छोड़, भाला ले करों में राणा
रणवीर की कहानी दुहरानी चाहिए।
चाल मरदानी, पानीदार जिन्दगानी, होनी-
शौर्य की निशानी देश की जवानी चाहिये ॥

५०

ऐसी ही विचारधारा के धनी युवा अनेक
उन दिनों काशीनगरी में विद्यमान थे।
लाहिड़ी, शचीन्द्र, मनमथ, बख्शी, अशफाक,
बिसमिल और योगेशादि नौजवान थे।
मर मिटने को दीपशिखा सी स्वतन्त्रता पै
आतुर उदग्र[1] शलभों[2] के प्रतिमान थे।
अँगरेजी सरकार से निपटने को एक
ही समान सबके उरों में अरमान थे॥

५१

जुड़ गये वीर चन्द्रशेखर भी इस युवा-
मण्डली के क्रान्ति के महान अभियान में।
जान पर खेलने की बान में प्रवीण, आन-
बान वाले क्रान्तिकारी दल के वितान[3] में।
दल की सदस्यता का योग्यता-प्रमाण-पत्र
पा चुके थे वेत्रदण्ड वाले इम्तिहान में।
'क्विक सिलवर' थे बकौल बिसमिल वीर
तीव्रतरमति हर योजना - विधान में॥

1. प्रचण्ड 2. पतंगों 3. विस्तार

५२

शस्त्रबल के बगैर क्रान्तिकारियों का दल
था समान तेज से विहीन दिनकर के।
विविध क्रियाकलाप हेतु चाहिए था धन,
दल के सदस्य थे सभी गरीब घर के।
अर्थ के अभाव में अनर्थ, दिखता न कोई
समाधान संकटों का क्रान्ति की डगर के।
चंदा माँगने में गोपनीयता की बाधा, आया
दल के समक्ष अर्थ - संकट उभर के॥

५३

मजबूर हो के कुछ डाके तक डाले गये
किन्तु ज्यादातर उनमें मिली विफलता।
महिलाओं से विनम्र सादर वचन बोल
माँगते थे धन, थी चरित्र में विमलता।
घिरे होने पै भी दयावश लक्ष्यभेद पटु
जानबूझ के बरतते थे अकुशलता।
सीधी उँगली से घी निकालने की प्रक्रिया में
जोखिम तमाम, थी नगण्य सी सफलता॥

५४

भूतपूर्व साधु रामकृष्ण खत्री एक दिन
बोले, गाजीपूर में उदासी एक सन्त है।
रुग्ण जराजीर्ण चन्द दिन का है मेहमान
एकमात्र स्वामी भारी गद्दी का महन्त है।
दुर्ग सा भवन, भक्त मण्डल विशाल और
सम्पदा अथाह भरी, आदि है, न अन्त है।
चेला चाहिये उसे तुरन्त, जिन्दगी का यह
शायद महन्त जी का आखिरी वसन्त है॥

५५

चेला बन जाए यदि दल का सदस्य कोई
सम्पदा मिलेगी शीघ्र उत्तराधिकार में।
दल का समस्त अर्थ-संकट कटेगा, शक्ति-
व्यर्थ न खपेगी अनचाहे कारबार में।
उक्त मत को सराहा गया सर्व-सम्मति से
जान उपयोगी भावी योजना - प्रसार में।
पाए गये शिष्य बनने के सर्वथानुरूप
सीतारामसुत साथियों के सुविचार में॥

५६

यद्यपि था कार्य यह रुचि के विरुद्ध [illegible]
दल - हित - हेतु उसे [illegible]
मिल पाई मुश्किल से '[illegible]' में [illegible]
जाल में 'उड़ा-ड़ड़ी'[2] के [illegible]

अवतार जिसका हुआ [illegible]
स्वाँग पूजापाठ का [illegible]
विश्ववंदनीय व्यक्ति को भी [illegible]
नाते मन के विरुद्ध कार्य करना [illegible]

५७

योग्य शिष्य की अथक सेवा के [illegible]
देह में महन्त की सुधार [illegible]
तन के बगीचे से खिजा [illegible]
फिर से बहार का [illegible]

गुरुवर लेने लगे फिर से [illegible]
लौट आया गालों पै [illegible]
शेखर को दल की धनोपलब्धियों [illegible]
धीरे - धीरे होता बण्टाढार दिखने लगा।

1. संस्कृत व्याकरण का एक नियम
2. गुरुमुखी वर्णमाला के प्रथम दो वर्ण

५८

पूरे ताम - झाम के सहित हो विराजमान
गद्दी पर नित्य चेले - चेलियों के सामने
माया महाठगिनी है, ज्ञान की परमशत्रु,
बाधा मुक्ति की, महन्त जी लगे बखानने।
देने लगे ज्ञान मायापतियों को, बदले में
उनकी प्रचुर सम्पदा लगे सँभालने।
आम आदमी को इंद्रियों का संयमोपदेश
खुद तरमाल सुबोशाम लगे छानने।।

५९

सोचने लगे आजाद, उपदेश में अभेद
किन्तु व्यवहार में स्व-पर-भेद बाकी है।
सीख सुख-दुख में समान भावना को किन्तु
मन-मध्य काम - क्रोध की कुरेद बाकी है।
बतलाते निन्दा निन्दनीय किन्तु मानस में
वृत्ति देखने की दूसरों के छेद[1] बाकी है।
राष्ट्र - भावना से दूर, कूपमण्डूकत्वचूर
गुरु होने का गरूर औ लबेद बाकी है।।

1. दोष

६०

हकदार बद्दुआओं के जो बदकार[1] उन्हें
धन लेके स्वर्ग का दिखाते दिव्य सपना।
दावे परमार्थ के, इरादे अर्थलोलुपों के,
चाहते हैं भौतिक समृद्धि में पनपना।
दीन-दुखियों की दुर्दशा पै तपना न जाना,
जाना नहीं देश की तबाही पै तड़पना।
आजीवन साधना से सिद्ध किया एक मंत्र-
'राम - नाम जपना पराया माल अपना' ।।

६१

भूखों मरते हैं इस देश में असंख्य लोग
खाते पकवान ये बहाने हरिनाम के।
भोगें श्रमशील जन जिन्दगी में दुख - दैन्य
मौज मारते हैं वे, नहीं जो कौड़ी काम के।
ज्ञान - अभिमान - घिरे, अवगुणग्राम[2] निरे,
जमघट चाहें नित्य पगों में प्रणाम के
साधुता के दंभ[3] क्षुद्रता के अवलंब, माया–
मोह के कदम्ब[4] निरे वंचक अवाम के ।।

---

1. कुकर्मी
2. अवगुणों के ढेर
3. पाखंड
4. समूह

६२

नाम के अनाम[1] के जो ज्ञानी सिर्फ नाम के हैं,
ठेके हैं के उन्हीं नाम मुक्ति के निजाम[2] के ।
सच्चे - सीधे सन्त निराडम्बर अमान मौन
बोले निरा डम्बर[3] कलाम[4] इलहाम[5] के ।
मन बेलगाम, पूरे गोकुल[6] - गुलाम, तम—
तोम के मुकाम, दाम में नहीं छदाम के ।
विरति - विराम, लोभ-लालच-ललाम, अरे !
सिर्फ धूम - धाम हैं, न काम के न धाम के ।।

६३

शम का शऊर, दम का हो मकदूर[7], मन
हो दुरित[8] - दूर मसरूर[9], सन्त है वही ।
सधवा को माँग में सिंदूर सा जिसे हो प्रिय
हाजिर हुजूर पुरनूर, सन्त है वही ।
हूर जैसी मगरूर माया के फितूर चूर-
चूर करे शूर बेगरूर, सन्त है वही ।
रूहानी सरूर भरपूर में जो मखमूर[10]
सन्त - रतनों में कोहनूर, सन्त है वही ।।

1. परमात्मा 2. प्रबन्ध 3. ढोंग 4. वचन 5. ईश्वरीय भाव
6. इन्द्रियाँ 7. शक्ति 8. पापरहित 9. प्रसन्न 10. नशे में मस्त

६४

सत्य-अभिधान[1] से, असत के निदान[2] से जो
दर्शन स्वरूप का करा दे, सन्त है वही।
फख्र फाँकामस्त फकीरी पै हो, निरीह[3] न्योता
शाहे - सीकरी का ठुकरा दे, सन्त है वही।
शक्ति में अगम्य, देशभक्ति में प्रणम्य, धर्म
हेतु काल को गले लगा ले, सन्त है वही।
दशमेश सा अनीति के विरुद्ध चार-चार
लाल बलिवेदी पै चढ़ा दे, सन्त है वही॥

६५

हवसे - नफस[4] के कफस[5] में फँसे बगैर
परिवार - पालन स्वधर्म - अनुसार हो।
प्रभु की नजर[6] पै नजर हो, न जर[7] चाहे,
मंजूर नजर[8] सन्त को न जरदार हो।
खिदमते - खलक[9] में झलक अलख लखे
ताके न फलक[10] बार-बार बेमिहार[11] हो।
अन्तर उदार, दीन - सेवा - साजगार, मानो
प्यार - पारावार, पैकरे - परोपकार हो॥

1. कथन 2. इलाज 3. कामना रहित 4. कामवासना 5. कैद 6. कृपादृष्टि
7. चाँदी सोना 8. भेंट 9. जग-सेवा 10. आसमान 11. निरंकुश

६६

सन्त के बुढ़ापे पर चढ़ती जवानी देख
डूब गये वीर ना - उम्मेदियों के गार[1] में ।
सोचा, खाते हैं मलाई, पेलने लगे हैं दण्ड,
घूस भिजवा के मानो यम - दरबार में।
बलि देने को बचे थे एक हम अजापुत्र
सब ने फँसा दिया अडम्बर - अँबार में ।
हाल जो यही रहा, महन्त जी मरें न मरें,
हम मर जाएँगे जरूर इन्तजार में ।।

६७

पत्र लिखा दल को मनोदशा बताते हुए
'शीघ्र आइये, यहाँ से हम उकता गये' ।
आये रामकृष्ण खत्री और मनमथ गुप्त
बहुविधि धैर्य धरने को समझा गये ।
किन्तु मठ के विजड़ जीवन में समाचार-
पत्र तक के अभाव से वे घबरा गये ।
और लक्ष्य-लाभ की कमठ - चाल से हो तंग
त्याग मठ, कर्मठों की मण्डली में आ गये ।।

***

1. गड्ढे

काकोरी-काण्ड

६८

धन का अभाव दूर करने को एक दिन
दल के सदस्य लगे सोचने - विचारने
सेठों साहूकारों पर डाका डालने के वक्त
पड़ते निरीह लोग भी थे कभी मारने
आम जनता के बीच होती थी खराब छवि
लगता था मन खुद को ही दुतकारने
अस्तु सरकारी कोष लूटने की योजना की
अंगीकार वीर क्रान्तिकारी परिवार ने

६९

गो कि भावी खतरे से अशफाक ने किया था
सावधान किन्तु होता होश कहाँ जोश में
उन जिन्दा-दिलों-की जवानी तो उतावली थी
अभिसार[1] हेतु मृत्युबाला के आगोश[2] में
सोचते थे, ऐसा हो धमाकेदार काम कोई,
गूँज तो उठे बधिर शासकों के गोश[3] में
जान लें फिरंगी भी, दहकता है एक उग्र
ज्वालामुखी आम आदमी के उर-कोश[4] में

७०

ईसवी पचीस नौ अगस्त दस क्रान्तिदूत
काकोरी पधारे साफ-सुथरे लिबास में
पैसेंजर गाड़ी आ रही थी, त्रस्त सूर्यदेव
व्यस्त हो रहे थे अस्त होने के प्रयास में
गाड़ी आई, तीन वीर जा डटे सेकेण्ड बीच,
शेष नरकेसरी विराजे थर्ड क्लास में
छूटी, कुछ दूर चली, खींच ली गई जंजीर,
गाड़ी चिंचिया के रुकी सिगल के पास में

1. प्रेमालिंगन
2. गोद
3. कान
4. कली या डिब्बा

७१

कूदा बल-पौरुष में सिंह के समान पुत्र
जगरानी जी का पहले छलाँग मार के
करके हवाई एक फायर, 'खबरदार !'
'सावधान !' बोला जोर-जोर से पुकार के
लूटेंगे खजाना सरकारी हम क्रान्तिकारी,
आपकी समझदारी, बैठें मौनधार के
गाड़ी से उतरने का जिसने किया प्रयत्न
सीधा यम-लोक वह जाएगा सिधार के

७२

खतरों से जूझने को योजनानुसार सभी
बद्ध-कटि कूदे ट्रेन से अशनिपात से
घिर गई पल में गरुड़गति से सकल
गाड़ी मानो बदली प्रचण्ड चक्रवात से
बख्शी-कर में निहार माउजर भू पै गार्ड
छिन्नद्रुम[1] सा गिरा प्रकम्पमान गात से
देखते ही लाहिड़ी को चालक चतुर प्राण-
भीख माँगने लगा पगों में प्रणिपात से

1. कटा पेड़

७३

सरकारी कोष हस्तगत करने के हेतु
बिसमिल और अशफाक संग - संग थे
धाए निधि-प्रति प्रतिनिधि क्रान्ति के वे रोष-
पूर्ण अंतरंग, जोशपूर्ण अंग - अंग थे
कोष के कपोत पै झपट्टा मारने को मानो
पग - पंख पै उड़े दो श्येन[1] सुविहंग[2] थे
गंग की तरंग सी पवित्र मुक्ति की उमंग
धारे रंग - ढंग से निहंग थे, मलंग थे

७४

एक था समाजी दूसरा नमाजी किन्तु दोनों
एक दूसरे के प्रतिमान लगते थे वे
निज - निज धर्म के प्रखर अनुयायी दोनों,
दोनों एक दूजे से महान लगते थे वे
'देश-हित' दोनों का प्रथम धर्म था, इसी से
दोनों दो शरीर एक प्राण लगते थे वे
हिन्दू या मुसलमान देश के निगहबान
दोनों इस तथ्य के प्रमाण लगते थे वे

1. बाज 2. पक्षी

७५

देखते ही बोले बिसमिल सम्पदा सकल
भेजती विदेश विष - बोरी ये तिजोरी है
बरजोरी निपुण निगोड़ी गोरी सरकार
हेतु बिन चन्द्र के अँजोरी[1] ये तिजोरी है
निज मोह - जाल में फँसाये प्रतिभा समग्र
लन्दन को छोरी सी छिछोरी ये तिजोरी है
है हरामखोरी की प्रतीक तोड़ो - तोड़ो इसे
तोड़ो आदमी की कमजोरी ये तिजोरी है

७६

पलक झपकते तिजोरी भूमि पै पड़ी थी,
वीर अशफाक लेके घन घालने लगा
कुलिश[2]-करों से हो रहा था घनपात[3] मानो
कारण में कार्य का स्वभाव जागने लगा
घनन - घनन घननाद व्योम में विचर-
विचर चराचर जगत सालने लगा
शौर्य का सदन मारे हन - हन घन यों कि
सधन तिजोरी का बदन काँपने लगा

1. चाँदनी 2. वज्र 3. हथौड़ा, बादल

७७

चार क्रान्तिकारी खड़े गाड़ी के उभयपक्ष
रह - रह के हवा में गोली दागने लगे
गाड़ी में सवार दो फिरंगी बार-बार मारे
डर के बिचारे शौचालय भागने लगे
कुछ देर में तिजोरी का गरूर चूर हुआ
सिक्कों भरे थैले दरारों से झाँकने लगे
होते ही विदीर्ण तिजोरी के क्रान्तिकारीगण
सरकारी धन चादरों में बाँधने लगे

७८

राष्ट्र चेतना की कृषि सरसब्ज हो, इसी से
परती पड़ी जमीन गोड़ना जरूरी था
भूल निज गौरव जवानी ऊँघने लगी थी
एक बार उसे झकझोरना जरूरी था
अँगरेजी पाप का घड़ा छलकने लगा था,
देश - हित - हेतु उसे फोड़ना जरूरी था
'शेष है रवानी देश की जवानी में लहू की'
जतलाने को तिजोरी तोड़ना जरूरी था

७९

ड्राइवर और गार्ड दोनों मुक्त हो गये तो
गाड़ी चल दी अगाड़ी हबर - हबर में
क्रान्तिकारी दल ले समग्र धनराशि आया
लखनऊ होके मानो सफल समर में
दूसरे दिवस सुर्खियों में समाचार छपा,
लूटी गई ट्रेन रात प्रथम प्रहर में
सरकारी गाल पै तमाचा जोरदार है ये,
चर्चा एक ही थी गली-गली घर-घर में

८०

फैल गया गुप्तचरों का विशाल जाल, खोजी
श्वानदल सा वो चारों ओर सूँघने लगा
पुलिस प्रदेश की हुई सतर्क, देशभक्त-
नागरों पै शक का पहाड़ टूटने लगा
कुछ सूत्र हाथ लगते ही सरकारी तंत्र
पागल गयंद[1] के समान झूमने लगा
कितने ही निरदोष पकड़े गये, सभी की
गर्दनों को मानो फाँसी-घर घूरने लगा

1. हाथी

८१

न्याय का तो नाटक रचा गया था, क्रूरतम
दण्ड दे के रुतबा दिखाना मुख्य ध्येय था
सरकार के विरुद्ध षडयंत्र रचने का
फल जनता को बतलाना मुख्य ध्येय था
रोशन ऽशफाक बिसमिल लाहिड़ी को फाँसी
दे के देश-भक्तों को डराना मुख्य ध्येय था
दस के बजाय बीस को सजा सुना के क्रान्ति-
कारी गतिविधि दफनाना मुख्य ध्येय था

८२

शेखर में थी विचित्र क्षमता विशिष्ट एक
भावी आपदाओं के सही - सही कयास की
'होनी धर-पकड़ बहुत शीघ्र है' भविष्य-
वाणी ये तदिन्द्रिय छठी ने अनायास की
आयु में कनिष्ठ, बल - बुद्धि में वरिष्ठ, सुधि
खोई न विपत्ति में भी होश व हवास की
सहसा हुए फरार यों कि फिर सरकार
जीवन में उनको गिरफ्त में न ला सकी

८३

एक बार आई माँ मिलन हेतु कारागार
दार[1] - दण्ड - हकदार अपने सपूत से
देखते ही माँ को बिसमिल के दो अश्रुविन्दु
झलक उठे हृदय के तरल दूत से
लोचन विलोल[2] अश्रुक्लिन्न[3] अवलोक लोल[4]
बोली वीर जननी स्वपुत्र अवधूत से
मेरे पूत[5] दूध को अपूत न बना सपूत
अश्रु ये बहा के प्राणमोह के सबूत से

८४

बोले बिसमिल, सौंपे तन - मन देश हित
झेले दिन संकटों के आरोहावरोह[6] के
मातृभूमि - हेतु प्राणदान सुघड़ी बड़ी ही
तकदीर से मिली है बाट जोह - जोह के
ऐसा बुजदिल नहीं बेटा बिसमिल तेरा
देख ले माँ तार - तार दिल को टटोह के
दीजिये न दोष, कीजिये न रोष, माँ ये अश्रु
कोह[7] के न छोह[8] के न द्रोह के न मोह के

1. फाँसी 2. सुन्दर 3. आँसुओं से भीगी 4. चंचल
5. पवित्र 6. चढ़ाव-उतार 7. क्रोध 8. क्षोभ

८५

आँसू नहीं माँ ! ये मेरे मन के सुमन, चाहें
तेरे पूज्य पावन पदों को सतकारना
देशप्रेम - दौलत बदौलत इन्हीं के मिली
आंसू इन्हें चूम - चूम चाहते दुलारना
भाग्य में लिखा के लाए जन्म लेते ही पतन
चाहें पद - रज लेके जीवन सँवारना
माँ ये मेरे मन के चितेरे[1], तेरे चरणों के
चेरे, चाहें मेरे मनोभावों को चितारना[2]

८६

गीतोपनिषद गुरुग्रन्थ कहते हैं, जियो,
वासना - विसार काम - कामना निवार के
फानी[3] जिन्दगानी आनी-जानी बार-बार यही
कहते कहानी सन्त ज्ञानी ललकार के
जानकार सार के असार देहभार के न
नाशकाल में कभी शिकार हों विकार के
राहगीर मुक्ति की डगर के निडर होके
चलते हैं मृत्यु की विभीषिका[4] विसार के

1. चित्रकार
2. चित्रित करना
3. नश्वर
4. डर

८७

प्रश्न ही नहीं, वो काल को निहार हो विहाल
जिसमें स्वदेश - प्यार - जौहर - जलाल[1] माँ
मौत को गले लगाने झूम के चलूँगा कल
माथे पै शिकन दिख जाए क्या मजाल माँ

सच पूछिये तो ये बुलन्द हौसला हमारा
तेरे शुद्ध दूध के वजूद का कमाल माँ
पूत में नहीं, सिफत दूध में है, बेमिसाल
पूत नहीं है तुम्हारा दूध बेमिसाल माँ

८८

धीरज धरो माँ बलिवेदी पै खड़ा हो कल
दूँगा बेहिजाब[2] मैं हिसाब तेरे दूध का
हँस-हँस दूँगा प्राण, घटने न दूँगा मान,
जग में जननि ! लाजवाब तेरे दूध का

आज भी तरल रक्त में रहा मचल बन-
बन के अनल माँ सैलाब तेरे दूध का
दार पै चढ़ेगा कल दारक[3] तुम्हारा, पूरा
करने को माँ ! अधूरा ख्वाब तेरे दूध का

1. देश प्रेम रूपी रत्न का तेज 2. बेझिझक 3. पुत्र

८९

माँ ! शरीर से पृथक प्राण होगे, इसका न
कष्ट कोई किन्तु एक कसक जरूर है
नियति - विधान से अजान इनसान, होता
कल्पना - वितान एक पल में कपूर है
चाह थी कि मुक्त मातृभूमि देख के मरूँ पै
आदमी अदृष्ट[1] के समक्ष मजबूर है
कल दुनियाँ से लेने जा रहा विदाई किन्तु
आजादी चिरागे-तूर सी अभी भी दूर है

९०

प्रेरणा का स्रोत माँ तू, अंतर-उदोत[2] माँ तू
मेरे मरु - जीवन में तू अमर मूर है
क्षमा कर देना भूल-चूक ममतामयी माँ
लाडला ये तेरा बालबुद्धि बेशऊर है
क्षमाशीलता की क्षमता की समता में माँ की
अक्षमा[3] क्षमा[4], जहान - जाहिर जहूर है
पूत हों अपूत भले जग में प्रभूत, होती
मा अमा[5]-न, मा तो अनमा-प,-रब[6]-नूर है

1. भाग्य 2. प्रकाश 3. असमर्थ, 4. पृथ्वी
5. अमा=कुमाता, अमावस्या अथवा अमान=बेअंदाज, मानरहित
6 अनमा-परब=पूर्णिमा अथवा अनमाप-रब=अपार परमात्मा

९१

बोली माँ, असार देह - ममता विसार, तू है
देश पै निसार, यही जिन्दगी का सार है
कोटि-कोटि माओं में कभी कहीं किसी के कोई
तेरे जैसा लाल एक लेता अवतार है
प्राण दे के दे रहा तू माँ को पुत्रदान श्रेय,
लाल ! तुझपै ये रोम - रोम बलिहार है
तेरे जैसे पुत्र से रहे हरी - भरी हमारी
कोख जन्म - जन्म कामना ये बार-बार है

९२

साश्रु नैन, वाणी में विराग, उर सानुराग
बुद्धि थी विदग्ध, देह दयनीय हो गई
विविध विरोधी भाव-भरी माँ की छवि बाँकी
हर्ष - दैन्य - मिश्रित अकल्पनीय हो गई
माँ ममत्वबादर सी, धैर्य के हिमागर[1] सी
सत्वगुणसागर सी महनीय[2] हो गई
पुत्र हो गया अशेष देश - अभिनन्दनीय
माता महिमा से विश्व - वंदनीय हो गई

1. हिमालय 2. पूज्य

९३

मातृभूमि हेतु एक पुत्र प्राण दे रहा है,
पुत्र दे रही सगर्व एक महतारी है
इत छाया नशा प्रिय प्राण· त्यागने का उत
प्राणाधिक - प्रिय-पुत्र-त्याग की खुमारी है
प्राणदान हो कि पुत्रदान दोनों ही महान
फिर भी न जाने क्यों ये भावना हमारी है
पुत्र का ये प्राणदान तो महान है ही किन्तु
माँ के पुत्रदान की महत्ता और न्यारी है



साधुवेश

६४

सातार - सरित - तीर एक थी कुटीर झाँसी
के समीप विद्यमान थान बियाबान में
अंतराल ग्रीष्मकाल का था कुटिया में एक
वटुक विराजमान श्वेत परिधान में

बजरंगबली जी के विग्रह[1] - समक्ष वह
था निमग्न देश - दुर्दशा - निदान - ध्यान में
लगता था, लग गया लगन - धनी लगन[2]-
लायक उमर में ही मुक्ति[3] - प्रणिधान[4] में

1. मूर्ति
2. विवाह
3. आजादी, मोक्ष
4. प्रयत्न, समाधि

९५

मस्तक विशाल - नभ, चन्दन-तिलक चन्द्र
नैन सालिपुण्डरीक[1] से विराजमान थे
कीर्तिगढ़ - गुम्बद पै कनक - शिखर - नाक,
रेख - वक्र[2] शौर्य के प्रतीक दो कृपाण थे

उन्नत प्रशस्त दृढ़ वक्ष, बलिवर्द - स्कंध
भुजदण्ड दो वितुण्ड[3] - शुण्ड के समान थे
केहरि - कमर, दोनों जंघाएँ मकर - पृष्ठ,
मीन ज्यों पिंडलियों के मध्य गतिमान थे

९६

रस के अभाव में रुधिर धरती का पी के
लाल - लाल फूल खिलने लगे पलाश में
हूक मारने लगा कुहू - कुहू पुकार पिक,
छा गई अनिष्ट - धुन्ध कानन - विलास में

छीने जाने लगे दुधमुँहें टिकोरे बलात्
अंब - अंक से निदाघ - तोषण - प्रयास में
गोरे शासकों सा ग्रीष्म - कोप था प्रवर्धमान
व्याकुल थे अग - जग मुक्ति की तलाश में

1. भौरे से युक्त श्वेत कमल
2. नव-विकसित टेढ़ी मूँछे
3. हाथी

९७

सुलग उठे विपिन, गगन हुआ मलिन,
सुहृद - हृदय सदरार दिखने लगे
मृग - जल की छलन, अबरा[1]नुरक्त - जन
लागे प्रिय तिमिर, तमारि खलने लगे

स्वेदकन की झरन, देहों का अनावरण,
पश्चिमी - हवा[2] के दुष्प्रभाव बढ़ने लगे
भानु गोरे - शासन समान चढ़ आसमान
कर[3] - वृद्धि से धरा - समृद्धि हरने लगे

९८

बदन-बदन[4] घर्म - चर्चिका[5] - फुरन, जन—
जन जड़ - जीवन[6] की चाह धारने लगा
अच्छे लगने लगे प्रदोष[7], मनुजों का मन
रोशनी की परछाईं से भी भागने लगा

कुलके कुलाल[8], कीमती हुए कुपात्र[9], तप्त
राजस प्रसार हरियारी[10] दाहने लगा
आदमी विलास हेतु शिखरों पै हो सवार
दर्शन प्रपात[11] का प्रशस्त मानने लगा

---

1. बादल, अधम 2. पछुआ हवा, पश्चिमी सभ्यता, 3. किरण, टैक्स
4 शरीर, मुख 5. अम्हौरी, ग्रीष्म चर्चा, 6. शीतल जल, चेतनाहीन जीवन
7. सायंकाल, अपराध 8. कुम्हार, दुष्ट पुरुष, 9. मिट्टी के बर्तन, नालायक लोग 10. हरियाली, हरिप्रेम 11 झरना, पतन

९९

काँटे[1] हुलसाए, कुम्हलाए सुमनों[2] के मुख
वृद्धि जागी ताप[3]-जन्य अप-त-करीरों[4] में
नभ था निरभ्र, भरें विरस[5] रसा[6] में रस–
गन्ध, क्षमता नहीं थी जल के जखीरों में
मौसम का इतना भयावह प्रकोप स्यात्
मिलना कठिन था विगत की नजीरों में
ग्रीष्म और गोरों के स्वभाव-साम्य से था खिन्न
क्रान्ति-ध्वज-धारी वो स्वतंत्रता - सफीरों[7] में

१००

सोच रहे थे वे, सभ्यता का दम्भ पाले हुए
ये मनुष्यता - कलंक दुष्टता में दंगली
भारतीयों को बता के श्वान के समान, करे
अपमान लाल मुख - वानरों की मण्डली
सभ्यता को वर्णमाला जिनसे पढ़ी, उन्हीं को
आज कहने लगें असभ्य और जंगली
दोष दें किसे, निसर्ग से ही दादुरों में नीच
कीच वन्दनीय, निन्दनीय गन्ध सन्दली

1. खल 2. सज्जन 3 गर्मी, ज्वर 4. अपत=पत्रहीन, निर्लज्ज, अथवा अप-तकरीर=बकवास 5 सूखी, 6. धरती 7. दूतों

१०१

उन्हें मुँह के निवाले छीनने का हक, हमें
मिलती है भरने पै आह भी प्रतारणा
शासकों के भाग्य लिखा सर्वसुखभोग, भोगें
शासित अभाव-भरे जीवन की यातना
उनका बलात् अधिकार भी प्रशंस्य कर्म
अपराध अपनी स्वतंत्रता की याचना
ऐसी कष्टदायिनी न दुनियाँ में वस्तु अन्य
जैसी यह परतंत्र-जीवन की यापना

१०२

मजबूरों बेबसों के रक्तपान में जो व्यस्त
कहला रहा जहान में दया-निधान है
जी रहा जो जिन्दगी घृणित अपमान-योग्य
क्या अजीब बात है, उसी का गुणगान है
रंगमहलों की नीव में दफन है जो अस्थि-
पंजरों का ढेर कितना किसे गुमान है
ये जघन्य आचरण आदमी का आदमी के
साथ, क्या इसी का नाम ईश्वरी-विधान है ?

१०३

निज कद ऊँचा करने को आदमी शवों के
ढेर पै खड़ा हो बातें करता ईमान की
पाप की कमाई से खरीदते हैं पुण्य लोग,
शक्ल दे दी दंभियों ने धर्म को दुकान की
कर्म का विपाक[1] और भाग्य का भरम देके
अवरुद्ध की प्रगति आम इनसान की
पीड़ित मनुजता को बहलाने के लिये ही
रचना रची गई क्या ईश्वरी-विधान की ?

१०४

वह समदर्शी और जगत - नियंता यदि
चलती है दुनियाँ उसी के संविधान से
देता क्यों नहीं वो फिर सबको समान हक
प्रश्न है ये एक उस सर्व - शक्तिमान से
हम अँगरेजों की गुलामी करने के हेतु
हो रहे विवश क्या उसी के फरमान से
ऐसा है, तो हम ऐसे हुक्म के गुलाम नहीं
द्वन्द्व होगा मेरा हर अनय - निधान[2] से

. परिणाम

2. अनीति को आश्रय देने वाला

१०५

अनय - विरुद्ध दण्डभय से जुबाँ न खोले
ढंग कायराना, है क्या ये भी कोई जिन्दगी ?
माँ, बहन, बेटियों की अस्मत लुटे तो करे
रोदन जनाना, है क्या ये भी कोई जिन्दगी ?
खाना, पीना, सोना, वंश को बढ़ाना, मर जाना
कोरा पशुबाना, है क्या ये भी कोई जिन्दगी ?
बुलबुले के समान अनदेखा, अनजाना
जीना, मर जाना, है क्या ये भी कोई जिन्दगी ?

१०६

परतंत्रता विरोधी स्वाभिमान की प्रतीक
लुप्त हो न जाय बलिदान की परम्परा
भूल के अतीत आत्मगौरव की थाती, आदी
हो न जाय दासता की भारत-वसुन्धरा
एक बार फिर से बने ये मातृभूमि मेरी
विश्व - वंदनीया अशकल[1] भुवनंभरा[2]
अस्तु जन - चेतना जगाने हेतु अपनाई
हमने सशस्त्र - क्रान्ति - पद्धति[3] स्वयंवरा

---

1. सम्पूर्ण
2. विश्व का पालन-पोषण करने वाली
3. मार्ग

१०७

चन्द क्रान्तिकारियों के बलिदान से ही मिल
जाएगी विमुक्ति, है हमें न ये मुगालता[1]
किन्तु ये भी सत्य है कि शोणिताभिषेक से ही
होती पल्लवित सर्वदा स्वतंत्रता - लता
जड़ हृदयों को हलचल से भरे शहीद,
भीरु पुरुषों का रक्त शीतल उबालता
जल-जल के अगरबत्ती सा वो देश-प्रेम–
सौरभ से आँगन धरा का भर डालता

१०८

होके पूर्ण काम पाती स्वर्गधाम में मुकाम
मातृभूमि वाटिका को गुलफाम[2] जिन्दगी
तप्त धरती पै बरसी न मघा मेघ सी तो
अजा - गल - थन सी बराए - नाम जिन्दगी
जग में जिया - मरा स्वदेश के लिये नहीं जो
पाई और खोई उसने हराम जिन्दगी
जीना वही, मौत को बना दे जो महत्वपूर्ण
मौत, जो उजागर करे तमाम जिन्दगी

1. धोखा 2. माली

१०९

जोश या उमंग भी रहे विवेक के अधीन,
ताकि हो न जाय कभी बेलगाम जिन्दगी
लगती विवेक से विहीन व्यक्ति को नितान्त
बदनाम जिन्दगी भी नेकनाम जिन्दगी

है विवेक भ्रष्ट दृष्टि का ही दुष्प्रभाव लोग
जीते बिन सोचे भावी परिणाम जिन्दगी
भारत में आपसी कलहपूर्ण जिन्दगी का
इन्तकाम है ये आज की गुलाम जिन्दगी

११०

शक्ति दो हमें प्रभो ! कि मन में स्वदेश हित
जीने - मरने की कभी कम हो न वासना
चाहता हूँ भावी-पीढ़ियों के मार्ग-दर्शन को
ध्रुवतारा बन के गगन में उजासना

जीना वो जो जीने का सलीका सिखलाता चले
मौत, जो बिखर जाए बन के सुबासना[1]
जीने-मरने की कला कौन जानता है भला,
जीना एक साधना है मरना उपासना

1. सुगन्ध

१११

टूट गई सहसा विचार - शृंखला, किसी ने
बोला, 'बाबा ! राम-राम' सादर उमाह में
देखा, एक वृद्धा - संग बहू - बेटियाँ अनेक
आ रही थीं नदी - अवगाहन - सुचाह में
सविनय बोल प्रतिवंदन में 'राम - राम'
रम गये बाबा नित्य - कर्म के निबाह में
करके जुहार - शिष्टाचार मौनधार चलीं
नारियाँ नहाने वन - अपगा[1] - प्रवाह में

११२

किरदार में उदार कृषिकारकों का दार-
परिवार सातार सरित - मझधार में
लेने लगा मौजों के मजे - समौज, मार - मार
किलकारियाँ विजन कानन - दयार[2] में
छप - छप करतल, झप - झप पद - तल
जागी हल - चल जल - तल के सिवार में
बँध गया अजब समाँ सा नूपुरों की रुन-
झुन, चूड़ियों की अनगढ़ झनकार में

1. नदी 2. वन-प्रान्त

११३

हल - हल सरिता में करने लगीं किलोल
हलर - हलर निरमल जल - धार में
पानी संग छींटें बानी के भी उछले, रहा न
ध्यान छोटे - बड़े का किसी के व्यवहार में

कुछ देर के लिये तो बिसर गये तमाम
नातों के लिहाज जल - केलि के खुमार में
अवरोध[1] पा बिसात भूल जल जानुदघ्न[2]
भी हुआ प्रमत्त सा प्रवृत्त अभिसार में

११४

हो गये प्रफुल्ल अंग - अंग अंगना - जनों के
प्रमित - उशीर - गंध - मिश्र - सीर - नीर[1] में
तन के धुले सो धुले, मैल मन के भी धुले
उमगी उमंग श्रम - शिथिल शरीर में

धर-धर चीर नीर - तीर बैठीं तीर - तीर
वामा वर - शील - मीर शीतल समीर में
बहने लगी सरस हास - परिहास रस-
धार प्यार - तकरार भरी तकरीर[4] में

---

1. बाधा, रनिवास 2. घुटनों तक गहरा
2. हलकी-हलकी खस की गंध से मिश्रित शीतल जल 4. बातचीत

११५

चक्की-चूल्हा, गाय-भैंस, दूध-घी की बातें चलीं,
बातें होने लगीं अमचूर औ खटाई की
जेठ जी की धौंस, देवरों की नोक-झोंक वाली
बातें चलीं सास और बहू की लड़ाई की
होने लगीं हँसी - मसखरी रसभरी बातें
छेड़ - छाड़ की ननद और भवजाई की
गौने बाद घर आईं सखियाँ बताने लगीं
बैठ के इकन्त बातें कन्त की ढिठाई की

११६

बूढ़ी माई बोलीं, छाँड़ौ कचर - पचर, सुनौ
सब जनी बात याक मोर मौन धारि कै
मन सों सकल इन्दरिन को दखल मेटि,
छाँड़ि परिवार, जाल जग को बिसारि कै
पुन्न जागि परे पुरिखन के, हमाए हियाँ
बाबा आइ बसे सब तीरथ निवारि कै
छाँड़ि कै पहार, जारि कामुदाहीजार, मानो
आए तिपुरार[1] बरुआ को रूप धारि कै

1. शंकर

११७

दूजी बोली, बजरंगबली जैसी देह तऊ
तेहा तको तनिकौ न ताकत को तेहिमा
कटिगा सिगर जाड़ दूठौ अचला मा मुला
खाँसी न जुखाम, है या सक्ति भला केहिमा
राति भर घूमो करैं हियाँ सेर चीता, बोलै
इनते न कौनो, राज है जरूर यहिमा
लागत निहाल ह्वै कै अंजनी के लाल जू ने
बकसी[1] बबा कों आपुनी अपार महिमा

११८

बोली तिसरी, बरमचारी बाबा के भरोसे
दूरि भा ई घाट ते लफंगन को आइबो
रोज नासकाठे घाट घेरि ठाढ़ होत रहैं,
लागत मुसीबत रहै नदी नहाइबो
बाबा जी हमाए बड़े सूधे मुला सूधन कों
टैढ़ोपन टेढ़न को जानत नसाइबो
जानत जहान, गाँव के पहलवान धन्नी–
राम को उफान कामदेव को सिराइबो

1. सौंप दी

११९

परके रहैं, न माने हरके[1], बताने बाबा-
जीते चोरी और सीना-जोरी मा बिगरि कै
जैसे भिड़हा पकरि बकरा का टाँगि लेय,
लीन्हेन उठाइ बाबा घींच ते पकरि कै
हाथ जोरि, माफी माँगि, छूटे मुसकिल माँहि
कान धरि हाथ, नाक धूरि मा रगरि कै
भूलि गईं लम्पटाँय, भागी सरऊ पै चढ़ी
फालतू जवानी एक छिन मा उतरि कै

१२०

ताकत कै अटकल तौ सकल देह देखे
आपै लगि जाति, बोली चौथी एक बिटिया
पै निसानेबाजी को गुपत गुन देखि दंग
रहि गे ई गाँव के निसानेबाज मुखिया
हलाकान कीन्हें रहै एक जंगली सुअर
मारैं गये गाँव के तमाम बन्दूकिचिया
दिन भर पिट्ट - पिट्ट करि बिरथा मा धूरि
फाँकि लौटि आए धरे काँधे पिटपिटिया

---

1. मना करने पर

१२१

दूजे दिन बाबा जी कहिन, हमहूँ चली, तौ
हँसैं लागि सिगरे सिकारी ही ही करिकै
मजा लीबे खातिर बन्दूक एक बाबौ जी का
मनै मन मुखिया दिवाइन निदरि कै
बिनसाने सबके निसाने बेठिकाने जाइ,
डींगन के पारा नारमल भे उतरि कै
भूलि गै ठिठोली, जब दागेन बबा जी गोली
ढेर भा अहेरा[1] एकै बेर मा चिघरि कै

१२२

आज हरिशंकर बरमचारी मुखिया के
सबते भरोसे - मंद भाई से लगत हैं
मुखिया जी सौखिया सिकार के रहैं सो रहैं,
चारि हाथ बाबा आगे उनते रहत हैं
सैर - सपाटा, सिकार, पूजा - पाठ औ परब
बाबा बिना मुखिया अधूरे से दिखत हैं
फैलि रहो नाँव, खुशबू सो ठाँव-ठाँव, गुन-
गन गाँव - गाँव आज बाबा के गवत हैं

1. शिकार

१२३

ठीकै कहती हौ बिटिया बरमचारी बाबा
कुल के दिया हैं कौनो ऊँचे परिवार के
बाबन के बाने दाने माँगन के लाने धारैं
मनमाने तौन ये न बाबा बिन सार के
आँसू भरि बोलीं बूढ़ी अम्मा धन माई - बाप
जायो जिन पूत सम राम अवतार के
लघु-लघु डग धरि, चलीं नैन जल भरि
अबला सकल घर - तन मन मार के

१२४

एक दिन कुटिया की ओर आ रहे थे, मिले
सहसा सिपाही दो फिरंगी सरकार के
बाबा को बुला के कर - धर के किया सवाल
'क्यों रे तू आजाद है क्या ?' गौर से निहार के
बोले, 'हाँ मैं हनूमान जी का भक्त हूँ आजाद
झूठे बन्धनों से इस जगत असार के'
उनमें से एक बोला, 'पास दरोगा के चलो,
बातें न करो ये नाकाबिल एतबार के'

१२५

बोले, 'बाज आएँ बरजोरी से, हमें हुजूर !
पट खोलने हैं हनुमत - दरबार के
आरती बकाया, भोग भी नहीं लगाया, देर
हो रही है पूजन में अंजनी - कुमार के
व्यवधान भक्त - भगवान के दरमियान
डाल के न काम कीजिये अनधिकार के
काम लीजिये विवेक से, न दीजिये कलेस
दरवेश[1] को पुलीस वेश यह धार के

१२६

फिर भी न माना, जिद्द पै अड़ा रहा तो जागा
क्रोध, हुए नेत्र लाल मानिंद अंगार के
'तेरे दरोगा से बड़े मेरे बजरंगबली'
हाथ छुड़ा झटके से कहा ललकार के
राम - राम न दुआ-सलाम दुष्ट ! सापमान
बोलता है पास चलने को थानेदार के
खा न दधि आस में कपास, रे दरोगादास !
दास हम खास बजरंगी सरकार के

1. साधु

१२७

दोनों हक्का-बक्का, शक और हुआ पक्का देख-
देख बाबा को प्रचंड क्रोध में उबलते
गड़ से गये निगोड़े गोड़, जकड़ी जुबान,
निकल गया शिकार, हाथ रहे मलते
सोचें, गत-जन्म-कृत-पुण्य ने बचाए प्राण
वर्ना देर थी न शाम जिन्दगी की ढलते
शेखर ने त्यागे बास-बेस दोनों अविलम्ब
झाँसी आए सूरज निकलते-निकलते

१२८

गुरुवर रुद्रनारायण जी की मारफत
होने लगी नये क्रान्तिकारियों की भरती
भगवानदास, सदाशिव रूप में नवीन
प्रतिभाएँ जीवट-धनी मिलीं उभरती
कानपुर में हुआ भगत सिंह से मिलन
मुरझाई आश-वल्लरी दिखी सँवरती
पंचनदवासी क्रान्तिकारियों के मिलते ही
दल की दशा सुधरने लगी बिगड़ती

१२६

मौत का मखौल उड़ाने में पटु राजगुरु
वीर सुखदेव से विचारवान भी मिले
महावीरसिंह, जयदेव, शिववर्मा और
सालिग समान बुद्धि - बलवान भी मिले
विजय कुमार, वैशम्पायन, सुरेन्द्र पाण्डे
और यशपाल जैसे निष्ठावान भी मिले
बम - रचना - कुशल श्री यतीन्द्र भगवती-
चरण से दल को निगहबान भी मिले



मातृ-मिलन

१३०

ज्येष्ठ पुत्र सुखदेव का निधन हो चुका था
शेखर के अतिरिक्त आसरा न और था
काट दी तमाम जिन्दगी गरीबी में ही किन्तु
आया ये विपन्नता का एक नया दौर था
करना प्रबन्ध अब एक - एक कौर का भी
सीताराम दम्पति को संकट बतौर था
निज जनकों की दीन दयनीय दुर्दशा पै
बहुधा दुखी दिखाई देता दल - मौर था

१३१

साथियों का था विचार दो सौ रुपये तुरन्त
भेज दिये जाएँ उन्हें मद में मदद की
भाई बोले, कद्र करता हूँ मैं सहानुभूति
और प्रेमपूर्ण इस भावना विशद[1] की
किन्तु पड़ जाएगी परम्परा गलत एक
नींव हिल जाएगी हमारे मकसद की
होगा बदनाम दल, नष्ट होगी छवि त्याग-
तप की, सभी के देश - प्रेम के विरद की

१३२

देशहित सौंप दिया जब सरबस तब
अवकाश[2] कहाँ स्वार्थ-भावना की खोट का
यह सब सहना है नियति हमारी अब
ओखली में सर दे के डर कैसा चोट का
कोटि-कोटि माँओं के समक्ष एक मेरी माँ का
कष्ट है न हेतु मेरे मन की कचोट का
हर माँ हमारी पूज्य माँ, महज एक माँ को
है अनर्थ - पूर्ण अर्थ भेजने का टोटका

1. निश्छल 2. अवसर

१३३

आम आदमी की श्रद्धा जीतने को राम जैसी
दृढ़ता चरित्र की नहीं जो अपनाएँगे
दुनियाँ की दृष्टि में गिरेंगे सो गिरेंगे, दुःख
है कि खुद की ही नजरों से गिर जाएँगे
भावना में बह के जो बहके विवेक से तो
उज्ज्वल जमीर की नजीर दे न पाएँगे
बनने न देंगे अस्तु अर्थ को अनर्थ - भूमि
हम दल - अर्थ दल - अर्थ ही लगाएँगे

१३४

साथी बोले, धन भेजिये न भेजिये परन्तु
एक बात बस इतनी सी मान जाइये
राष्ट्रधर्म को अबाधगति से निभाते हुए
पुत्र धर्म को भी यथा - सम्भव निभाइये
अपमान हो निरीह मातृ - ममता का, उर-
दृढ़ता निठुर इतनी न अपनाइये
अपने वियोग में बिलखती बिचारी माँ को
एक बार घर जा के धैर्य तो बँधाइये

१३५

था मनोनुकूल मित्र - मंडली का अनुरोध
चारा भी नहीं था अतिरिक्त अंगीकार के
मनोहरलाल त्रिवेदी निवासी भावरा के
देशभक्त और थे हितैषी परिवार के
अपने पहुँचने की सूचना उन्हीं के द्वारा
भिजवाई वक्त की नजाकत निहार के
रात घर जाके, खुशखबरी बता के, ढंग
समझा के आए वे सतर्क व्यवहार के

१३६

पीर सही पाँच - पाँच पूत जनिबे की तऊ
पुत्र - सुख - हीन मैया करम की मारी है
लीन्हें चार-चार लाल दई ने छिनाय हाय !
लहुरो बचो सो तापै कोप सरकारी है
कुल के दियन के बगैर बिरधापन मा
सूझत कछू न अस छाई अँधियारी है
कौनो खुसखबरी पै होत न बिसास निज
मंद - भाग सो निरास अस महतारी है

१३७

दूध की जरी सी मही फूँकि-फूँकि पी रहीं माँ,
तर्क करैं कन्त सों बताए बिरतंत पै
सुनि कै ससौंह प्रात - आवन कै बात रात
बामन को डग भै मनौ बगैर अंत कै
कबहूँ बिसूरैं, कबौं मुसकाँय सोचि - सोचि
लरिकाई अपने ललन बलवन्त कै
ठूँठ ते निकरि परे पीका[1], उमगी उमंग
पतझर बीच भई आमद बसन्त कै

१३८

झारी झुपरी, निझारे मकरी के जार सारे
कूड़ा फेंकि आईं घर - आँगन बुहारि कै
तड़के नहाइ - धोइ मंदिर मझाइ आईं
गौरा पारबती का मनाइन गुहारि कै
घरुआ मा पानी मैया तुलसी के डारि आईं
सुरजौ अरघि जल आँजुरी ते ढारि कै
मन मा किहिनि संकलप 'अन्न-जल लेबै
आज इन नैनन सपूतहिं निहारि कै।'

1. अंकुर

१३९

साहस बटोरि लोटा भर माँगि छाछ लाई
छपरा ते धरिन तरोई टोरि - टोरि कै
बनियाँ ते धनियाँ औ गुड़ जीरा हींग लाई
दैके चार धेला मलिनाँचल ते छोरि कै
बीनी, छरी पछुरी धरी मटकिया मा दार
दीखेन दुबारा छानि - बीनि कै पछोरि कै
नैन मूँदि कै उठावैं सगुनौती बार - बार
कुसल मनावैं दुर्गा माई ते निहोरि कै

१४०

उठि-उठि बैठें, बैठि - बैठि उठि ठाढ़ी होंय
कल न परत अस चाव अगवानी को
छिन घर आवैं, छिन जावैं देहरी लौं धाइ
ताकैं इत उत निज पूत स्वाभिमानी को
पुनि-पुनि चढ़ि मुड़वारी टकि - टकि देखैं
छितिज लौं निज अवलम्ब जिन्दगानी को
ममता-जलधि मा उठो है ज्वार, आइ रहो
सालन के बाद आज लाल जगरानी को

१४१

झकझोरे डारै मन का उमंग पुरवाई
आई नैन - नेह बरसावन कै बिरिया
रोम - रोम पुलकि-पुलकि उठि - उठि बोलै
लुरि-लुरि लोरी चारु गावन कै बिरिया
दुर्गा माता कै मनौती पूरी भई, आई पुत्र-
प्रेम - पयोनिधि - अवगाहन[1] कै बिरिया
बीति गई मन समझावन कै बिरिया कि
आई मोरे ललन के आवन कै बिरिया

१४२

दुख के पहाड़ के पहाड़ लीलि गयो उर,
नेक सो आनंद उभरो परै भर्‌यो न जाय
एतो बड़ो तर्‌यो सुतविरह जलधि किन्तु
मिलन की आस को सरोवर तर्‌यो न जाय
खबर बगैर मजबूरी मा सबर कीन्ह
खबर मिली तौ अब सबर कर्‌यो न जाय
बारह बरस लगि धीरज धर्‌यो पै यह
बारह घरी को अब धीरज धर्‌यो न जाय

1. पुत्र-प्रेम रूपी समुद्र में स्नान

१४३

सिसकी भरन लागीं ह्वै अधीर बीते जब
चार याम, पाँव पसारन लागी यामिनी
'आयो नाहीं लाल' मुख छवि भै मलीन जैसे
राहुग्रस्त चन्द्रमा कै श्री विहीन चाँदनी
'सकल बलाय लागै लाल कै हमाए सिर'
बार - बार माँगैं बर बन्दि सिंहवाहिनी
निज हिय-पीर जानैं माई या कि जिन भोगी,
राम जी की जननी कि नन्द जू की भामिनी

१४४

आवन कै बात सुनि सुख देन लागे प्रान
जीरन सरीर मा जो दुखन लगे रहैं
मिलन कै आस अब फेरि उपजावैं लागि
मोह - जाल जीवन के टूटन लगे रहैं
काहे कौं जगाए जिन्दा रहिबे के अरमान
ह्वै कै जो निरास अब बुझन लगे रहैं
भेजि कै सनेस पपरी उचारी घावन की,
माँ बियोगिनी के जौन सूखन लगे रहैं

१४५

बूढ़ी माँ के धीरज को काहे इन्तिहान लेत
आवौ मोरे पूत इन्तजार करवावौ ना
भसम भये रकत - माँस और देर करि
साँसन को सेस अनुसासन नसावौ ना
रहत अभागे भीगे - भीगे नैन दिन - रैन
बिन बैन रोइबे को नेम निभवावौ ना
आवौ - आवौ ललन बहुत तरसायो तोरी
गैया जैसी मैया ताहि और तरसावौ ना

१४६

सावन का पावन प्रदोष पर्व - काल, छाये
परजन्य, सूरज ढला, अँधेरा हो गया
तन - मन से निढाल, माता उठीं, दीप बाल,
देखा, माँ उमा के चित्र पै उजेरा हो गया
खटके मिटे, कपाट खटके नहीं कि एक
झटके में सारे कष्ट का निबेरा हो गया
रात की हुई हो शुरुआत जग में भले ही
जगरानी माँ के मन का सबेरा हो गया

१४७

शक्तिस्रोत जागा, दौड़ीं, खोला दरवाजा, पाया
पुत्र लीन निज - युग - चरण - नमन में
सुत को उठा के जीर्ण छाती से लगा के स्निग्ध
चुम्बन लुटाए शत - शत क्षण - क्षण में
माँ के मन पुत्र, पुत्र - मन में समा गई माँ,
माँ रही न माँ, रहा न पुत्र पुत्र मन में
खो गया वसुन्धरा की गोद में अनन्त नभ
या कि वसुधा स्वयं समा गई गगन में

१४८

मानो धरती के ताप दूर करने के हेतु
उतर धरा पै भूमि - पुत्र खुद आया हो
देवों में प्रथम पूज्य मानो गजवदन के
शीस पै उमा के शुभ आँचल का साया हो
मानो वर्धमान यश गरिमा से जा मिला हो
त्याग ज्यों विपन्नता की गोद में समाया हो
कैसे हो बखान उस छवि का मिले हों जहाँ
दो अनन्त, मानो एक ब्रह्म दूजी माया हो

1. मंगल (ग्रह)

१४६

माथा चूमि-चूमि सूँघि-सूँघि सुत देह - गन्ध
हाथ फेरि - फेरि अंग - अंग सहलावतीं
खान-पान की असावधानी हेतु डाँटि-डाँटि
पुष्ट देहयष्टि[1] हू कौं दूबर बतावतीं
करि-करि कोप, रूठि-रूठि, आँसू ढारि-ढारि
दुख - दर्द निज कोख - जाए को सुनावतीं
बीच-बीच पूजा-पाठ-रत सीताराम जी कौं
'पूत आ गयो है' टेरि - टेरि कै बुलावतीं

१५०

चौंकि एकाएक परीं, सोवत जगी हों मानो,
हाय ! हम पानी लग पूँछो नाहीं लाल को
झट-पट जाइ, घट-जल लोटा भर औंजि,
लाईं मटकी ते गुड़ लायो हाल - हाल को
जिद्द करि - करि डली गुड़ की खवावैं जैसे
हंसनी चुगावै मोती शावक मराल को
पावैं निज कर सों खवाइ सुख अस जस
पावै नन्दिनी पियाइ दूध बच्छबाल को

1. शरीर

१५१

पूजा से निवृत्त सीताराम जी पधारे, जो कि
देह से दधीचि शुचिता के प्रतिमान थे
परहित - रत, उपदेश से विरत, सत्य–
साधना में लीन, पुरुषत्व के प्रमाण थे
धन से गरीब, मानधन से अमीर, हर
हाल में सुखी, गृहस्थ संत के समान थे
धोती, अँगरखा और काँधे पै अँगोछा ये ही
सीताराम जी के मात्र तीन परिधान[1] थे

१५२

प्रणत स्वपुत्र कौं असीस दै, रसोई भेजि
सहधर्मिणी कौं, पास बैठे सनमानि कै
पूँछि कै कुसल, सुनि हाल भे गँभीर, बोले
आये कितने दिनन रहिबे की ठानि कै
बोले चन्द्रशेखर, 'पिताजी ! हम का पुलीस
ढूँढ़ि रही अँगरेजी-राज-रिपु जानि कै
ताते रात रुकि प्रात होत ही पयान केरि
अनुमति चाहौं कालचक्र[2] अनुमानि कै

1. वस्त्र 2. समय का फेर

१५३

'गुपचुप निगरानी अपने घरौ कै रोज
ह्वै रही है रातो - दिन मोर अनुमान है
कौनो भेदिया कहूँ न पाछे-पाछे लाग होय
का पता कुचक्र का कहाँ विधीयमान है
हमरे निमित्त ते विपत्ति आप पै न आवै
हम सहि लेबै जौन बिधि का बिधान है
मोर कोऊ का बिगारि ल्याहै, हम बाँधे सीस
पै कफन और हथेली पै धरी जान है

१५४

'अम्मा जान द्याहैं, पै न जान द्याहैं दादा! हमैं
यहिमा न चूक हमरे हिये बिसास है
मोम होत कुलिस - कठोर मन मोर, अस
माँ कै ताब सों भरी उसाँसन कै रास है
करिहौं जवाई कै ढिठाई बिन पूँछे माँ सों
माँगहुँ बिदाई, एतो साहस न पास है
जैसे बने उन्हें समझाइ - बहलाइ लीन्ह्यो
रावरे पगन दास कै या अरदास है'

१५५

"रोके रुकिहौ न तुम, ताते रोकिबे न हम,
जाहु पूत ! ठान जो पयानै केरि ठानी है
ध्यान राख्यो कष्ट-कण्टकन ते भरी है राह,
सील को कवच धारि सुगम बनानी है
दृढ़ता चरित्र कै नहीं तौ क्रान्ति देहरी पै
पाँव धरिबो महज भूल बचकानी है
आन अपनी औ सान राख्यो पुरिखन केरि
लाल ! तोरे तन बैसवारे केर पानी है"

१५६

"जान रखे हौ हथेली पै रखौ, पै याद राख्यो
देस कै धरोहर तुम्हारि जिन्दगानी है
तैस खाइ, खोइ प्राण-सम्पदा न दीन्ह्यो, तुम्हैं
एही ते स्वतंत्रता कै कीमत चुकानी है
कूकुर पै तोप, तेग झींगुर पै ताने फिरौ,
यहिमा न वीरता न कौनो बुद्धिमानी है
गर्दन मरोरि मर्दि - मर्दि देस - द्रोहिन का
गर्द करिबे कौं होति मर्द कै जवानी है"

१५७

"पुत्र-सुख नाहीं है तौ ना सही, सहब हम
पुत्र - हीन के समान रहिबे कै बेदना
सहि लेबै मन हलको करैं का आपसै मा
दुख - दर्द कहिबे औ सुनिबे कै बेदना
हम दोनों सहि लेबै तुम्हरे बिना बुढ़ापे
मा अभाव जीवन के सहिबे कै बेदना
तुम बेड़ी काटौ मातृभूमि कै सपूत ! हम
सहिबे दुखागिन मा दहिबे कै बेदना"

१५८

इतने मा आईं जगरानी मैया, बोलीं, "चलौ,
बातन को रस छांड़ौ, भोजन तयार है
रोटी, दार, भात, साग, रौता बनो साथ-साथ
डारी सोंधी-सोंधी हींग-जीरा कै बघार है
बाप - बेटा भोजन ते पहिले निपटि लेव,
बातैं करैं का तौ परो बखत अपार है
एक तौ सिराइ रहे व्यंजन औ दूजे लाल
थको - माँदो - भूखो जाने कब को हमार है"

१५६

हाथ-पाँव धोइ,आधी धोती ओढ़ि-ओढ़ि आइ,
चौका मा ग्रहण कीन्हों आसन असन कौं
तोस न मिलत परसत, जगरानी ताते
परसि - परसि पुनि चाहै परसन कौं

माखन की मटकी सो उँड़िलो परत मन
जसुधा जिँयावै जिमि बालक किसन कौं
बलिहारी जात मैया, व्यंजन[1] करत स्वाद
जात[2] जब माँगै बार-बार व्यंजनन[3] कौं

१६०

आज सीताराम जी कै नींद गै हिराय कहूँ
सोवत रहैं सदैव पाँव जो पसारि कै
देखैं अविकल अरधांगिनी कौं निद्रालीन
उबलत दूध छींटा जल जिमि धारि कै

सोचैं, "मुरझाई बेल सी बिचारी महतारी
हरियाइ उठी छिन पूतहिं निहारि कै
प्रात बिललात बालबच्छ सी रँभात याहि
लावब कहाँ ते हाय ! लालहिं सिहारि कै

1. बखान 2. पुत्र
3. दाल, भात, साग आदि भोज्य पदार्थ

१६१

तब तक जागे चन्द्रशेखर, उठा के घड़ी
देखी, जान गये, घड़ी आ गई गमन की
शय्यासीन चिंतित पिता को देखा और आँखों-
आँखों कह डाली मानो बात सारी मन की
एक बार देखा सुप्त माँ की ओर झाँक उठे
सीमा लाँघ अश्रु - जल - बिन्दु दो नयन की
जब तक पिता कुछ सोचें, कुछ बोलें, पुत्र
जा चुका था पूरी कर प्रक्रिया नमन की

१६२

इत बूढ़ी माँ के नयनों का अनिरुद्ध[1] नीर
उत अवरुद्ध[2] क्रान्ति-स्यन्दन[3] बुला रहा
एक ओर जन्मदायिनी - करुण - क्रन्दन तो
दूजी ओर जन्मभूमि - बन्धन सता रहा
दरिया दुखों का इत एक माँ का, उत कोटि
माँओं के दुखों का पारावार लहरा रहा
इष्ट-ध्येय-निष्ठ वीरों में वरिष्ठ शेखर को
काम कैसे - कैसे विधिवाम ये दिखा रहा

1. बहता हुआ
2. रुका हुआ
3. क्रान्ति रथ

१६३

एक गरिमा से एक नाम से है जगरानी
दोनों जगरानियों का नेह टकराता है
एक ओर जन्म-भू है, एक ओर माँ प्रसू[1] है
श्रेय - प्रेय का मिथोनिवेश[2] भरमाता है
किन्तु अपने-पराये की परिधियों[3] से मुक्त
प्रेय ही सुकवि - गेय श्रेय बन जाता है
अस्तु व्यष्टि[4]-हित-निरपेक्ष हो विवेकशील
व्यक्ति खुद को समष्टि[5]-हित में लगाता है

१६४

लगने लगा हो जिसे सकल समाज निज,
उसे व्यक्ति - बंधन जकड़ सकता नहीं
परिजन[6] सकल भरत भूमिवासी जिसे
परिवार मोह में वो पड़ सकता नहीं
परतंत्रता - विरोधी दृढ़ - निश्चयी चरण
बलिदान - पथ से उखड़ सकता नहीं
नशा देश की दिवानगी का चढ़ जाने पर
और कोई नशा फिर चढ़ सकता नहीं



1. जन्म देने वाली
2. एक दूसरे में प्रवेश
3. घेरों
4. व्यक्ति
5. समाज
6. परिवार

साण्डर्स-वध

१६५

अँगरेजी कायदे - कानून हानि भारत की,
करते थे वृद्धि अँगरेजों की कमाई में।
इसीलिये भाव बगावत के जगे प्रगाढ़,
पढ़ी - लिखी पीड़ित प्रबुद्ध तरुणाई में।
अट्ठाइस ईसवी में आया साइमन यहाँ
रचने प्रपंच, कुछ कहने सफाई में।
घूँसा मार के ज्यों फुसलाने हेतु चालबाज
कोई सहलाने लगे पीठ बेहयाई में।।

१६६

शत प्रतिशत अँगरेज थे सदस्य, न था
कोई भारतीय आयोगीय अगुआई में।
न्याय को खपुष्प[1] सा अलभ्य जान एक जुट
कूदा सारा देश बहिष्कार की लड़ाई में।
जहाँ जहाँ गया साइमन, वहाँ वहाँ मिली
घोर घृणा और अपमान पहुनाई में।
'साइमन लौट जाओ, लौट जाओ' नारे मिले
झण्डे झुण्ड-झुण्ड मिले काले बहुताई में॥

१६७

लाहौर नगर के निवासी लाला लाजपत-
राय जननायक युवा-हृदय-हार थे।
स्वामी दयानन्द के अनन्य अनुयायी राष्ट्र-
भक्त राजनीति के प्रखर कर्णधार थे।
शासन-विदेशी-वन-गहन-दहन-हेतु
दावा[2] से दहकते तदीय[3] उदगार थे।
आ डटे विरोध में असंख्य जन साथ मानो
लहराते ज्वार के समेत पारावार थे॥

1. आकाश कुसुम
2. दावानल
3. उनके

१६८

हिंसा से रहित शांतिपूर्ण था विरोध किन्तु
भीड़ और भीड़ की उमंग लाजवाब थी।
'साइमन लौट जाओ, लौट जाओ' नारे सुन
अंगरेज एस. पी. की खोपड़ी खराब थी।
हुक्म से उसी के होने लगी सत्याग्रहियों पै
घोर यष्टि-वृष्टि[1] बेलिहाज बेहिसाब थी।
लाला पै डी.एस.पी. के दण्ड-प्रहारों से हुई
नग्नता फिरंगी-सभ्यता की बेनकाब थी॥

१६९

लाला जी लहूलुहान हो के धरती पै गिरे
क्षीण तन, मन में मगर स्वाभिमान था।
सैकड़ों युवक-वृद्ध घायल हुए परन्तु
भीरु-वृत्ति[2] का कहीं पै नाम न निशान था।
करके निहत्थों पै तथापि अत्याचार, नहीं
शर्मसार[3] अँगरेज-शासन-विधान था।
क्रान्तिकारी-दल की सहन-शक्ति से परे ये
सारे देशवासियों का घोर अपमान था॥

1. लाठीचार्ज 2. कायरता 3. लज्जित

१७०

इस हादसे में होके आहत सिधार गये
स्वर्ग कुछ दिन बाद पंचनद - केसरी[1] ।
हो गया विषाद-ग्रस्त सारा देश, लाला जी की
मृत्यु देश - प्रेमियों पै गाज[2] बन के गिरी ।
पी गये अहिंसापथगामी अपमान किन्तु
शेखर सरोष गरजे मनुज - केहरी[3] ।
हम लेंगे बदला, न जीवित बचेगा वह,
प्राणघाती चोट लाला जी पै जिसने करी ।

१७१

सोचा गया, कालेज डी.ए.वी के समीप एस.
पी. का दफतर है, जगह सुनसान है ।
डी.एस.पी. साण्डर्स बैठता वहीं, अकेले
जै-गोपाल को ही चेहरे की पहिचान है ।
जै-गोपाल का इशारा पा भगतसिंह और
राजगुरु पूरा करेंगे जो शेष प्लान है ।
शेखर को करना था दूर यदि योजना की
पूर्णता में कहीं कोई आता व्यवधान है ।।

1. पंजाब के शेर 2. वज्र 3. नृसिंह

१७२

दूसरे दिवस दोपहर बाद चारों लोग
चल दिये खतरों भरे महाभियान में।
जैगोपाल आगे गेट के रुका झुका यों मानो
देख रहा दोष निज साइकल यान में।
राजगुरु और वीरभगत खड़े सतर्क
अपलकलोचन सशस्त्र सावधान में।
कालेज - प्राचीर पै सँभाल माउजर भाई-
जी थे विद्यमान सेनापति ज्यों कमान में॥

१७३

कुछ देर बाद आया बाहर बरामदे से
डी.एस.पी. चेहरे पै रोब था, गुमान था।
कसी-कसी देह में थी ठसक भरी, घमण्ड
पद का, बगलबीच बेंत दृश्यमान था।
नियति - छला, अकड़ - अकड़ चला, पता था
किसको भला, लिखा क्या विधि का विधान था।
वाहन के रूप में जो सामने विराजमान
फटफटयान[1] था कि मौत का विमान था॥

1. मोटरसाइकिल

१७४

होके साइकिल पै सवार, जेब से निकाल
जैगोपाल ने रूमाल अपना हिला दिया।
इंगित[1] मिला, चला उमंगित - हृदय राज,
भक्त[2] ने भी कदम - कदम से मिला दिया।
फटफटिया ने फट - फट बोल के इधर
फटाफट काम का मुहूर्त बतला दिया।
गरजा उधर माउजर राजगुरु का डी.
एस.पी. की खोपड़ी को फूट सा खिला दिया।।

१७५

गोली लगते ही गिरा यान के सहित, रक्त
लाला - दुख - ग्रस्त - भू - बदन राँजने लगा।
कसर न कोई मरने में रह जाए अस्तु
गोली पर गोली राजगुरु दागने लगा।
जोश में रहा न होश, रिक्त-कारतूस-कोष
हो सरोष राज अपने पै झाँखने[3] लगा।
दहला पुलिस दल दहशत में हो रब-
रूबरू[4] वो रहमो - करम माँगने लगा।।

1. इशारा
2. भगत सिंह
3. खीझने
4. सामने

१७६

देखा भक्त ने डी.एस.पी. तड़पता था पड़ा,
सासें आखिरी थीं किन्तु था अभी मरा नहीं ।
कर्ज लाला जी की मौत का चुकाना फर्ज मान
फायर अनेक झोंक डाले जी भरा नहीं ।
गूँजा तभी शेखर का स्वर 'काम हो चुका है,
लौटो, व्यर्थ में लो मोल और खतरा नहीं ।'
लौटने लगे थे दोनों किन्तु देखा खतरे का
ज्वार निपटा है सिर्फ भाटा उतरा नहीं ॥

१७७

फर्न नामधारी, एक अँगरेज अधिकारी
नौजवान तन्दुरुस्त ट्रैफिक पुलीस का ।
सहसा प्रकट होके झपट पड़ा भगत-
सिंह की तरफ, होगा चौबिस - पचीस का ।
बोला, "ब्लडी ब्लैक मैन टेररिस्ट[1] जाटा कहाँ,
एनिमी[2] है टोम एमपायर[3] ब्रटीश का ।"
भक्त ने पलट झोंक फायर कहा, "ले दुष्ट !
एक ये बचा था तेरे लिये बकसीस[4] का ॥"

1. आतंकवादी
2. शत्रु
3. राज्य
4. इनाम

१७८

झटके से हट के निवार वार फुरतीला
फर्न फुरती से गया लेट बल पेट के।
शक्ति से अहीन किन्तु साहस विहीन रहा
करता मलीन वो जमीन भेंट-भेंट के।
हामी[1] सा गुलामी का चनन सिंह चीफ नामी
नमक-हरामी तभी दौड़ा सरसेट[2] के।
झल्ल[3] में झटक डर मौत का भी हो निशंक,
झपटा झटिति[4] झंप[5] मार झरपेट[6] के॥

१७९

खाली हो चुके थे अस्त्र दोनों क्रान्तिकारियों के,
साधन बचाव का बचा था सिर्फ भागना।
अस्तु नीति त्याग के अतीत[7] भागे वे अभीत
मोत दोनों मान के अलीक[8] द्वन्द्व-कामना।
भागा पीछे-पीछे भागते भगत के चनन
पीछे कृष्ण के ज्यों काल यवन भयावना।
लगता था रणछोड़ वाली रणनीति लेने
जा रही दुबारा धरती पै अवतारणा॥

1. समर्थक 2. खरीखोटी सुनाते हुए 3. पागलपन 4. बिना सोझे-समझे
5. छलांग 6. आक्रामक मुद्रा में पीछा करते हुए 7. पिछली 8. व्यर्थ

१८०

भाँप के चनन का इरादा राजगुरु क्रुद्ध
कृष्ण - सर्प के समान फुफकारने लगा।
मारा हमने है, श्रेय दे रहा भगत को ये,
पाजी मेरे पुरुषार्थ को नकारने लगा।
मुझसे असरदार को निदर[1] दुष्ट दार-
कर्म[2] हेतु सरदार को सकारने[3] लगा।
लगता है लख मुझे काला ये पुलीस वाला
साला शक्ल आला पै स्वप्राण वारने लगा।

१८१

स्वाभिमान हेतु पक्षघात[4] के समान गोरे-
शासन को वरदान मान धारते हुए।
अँगरेज अँगरेजी अँगरेजियत हेतु
भीतर के भक्ति-भाव को निखारते हुए।
दासता-विकार का शिकार ये गँवार गोरी-
सरकार पै स्वदेश प्यार वारते हुए।
भगत को बाहुपाश में समेटने चला है
भोग[5] सी भुजंगमी[6] भुजा पसारते हुए।।

1. निरादर करके 2. शादी, फाँसी 3. स्वीकारने
4. लकवा 5 फन 6. सर्प जैसी

१८२

घृत से अनल, मृगजल से तृषा बुझाना
चाहे नगराज को भुजाओं से उपारना।
विभ्रम-विभोर[1] हो चकोर चाहे अग्निभोग,
गीध होके चाहे विष्णु - वाहन[2] पछारना।
चाहे रंग में फिरंग के रँगा ये अंध[3] मानो
तम की तलाश में तमारि को भी त्रासना।
याकि जिन्दगी से तंग मतिमंद ये पतंग
चाहे पैठ के दवाग्नि में भी देह धारना।।

१८३

भागा पीछे-पीछे जानबूझ के, मैं सोचता था,
जीत होगी मेरी दौड़ने में हार जाने में।
पीछे पाके पकड़ेगी मुझे ही पुलीस किन्तु
भाग्य तो तुला है साथ भक्त का निभाने में।
लगता है जनम का साथी मेरा दुरभाग्य
कसर न छोड़ेगा असर दिखलाने में।
होगी जमा सारी श्रेय-सम्पदा हमारी आज
भगत के नाम शील - शौर्य के खजाने में।।

1. भ्रम के वशीभूत
2. गरुड़
3. अंधा, उल्लू

१८४

हथकड़ी होगी उसकी कलाई में, तू मान
दल का विधान जान अपनी बचाएगा।
फेर तेरे पानी पर पानी, तेरा भोग्य-दण्ड
भोगेगा वो, पानी पानी हो तू पछिताएगा।
तदबीर[1] से मिटा दे तकदीर की लकीर,
वीर ! वर्ना पीर सा जमीर तड़पाएगा।
होगी उसे फाँसी, वह हीरो कहलाएगा, तू
जीरो था अभागे और जीरो रह जाएगा।।

१८५

मेरी मृत्यु-प्रेयसी के मन में लगा बतासा
घुलने जरा सा पानी देख के भगत का।
झाँसा दे मुझे, पलट पाँसा, लासा डाल फाँसा
दादा को, दिखा रही तमाशा उलफत का।
चाहे नित्य नव-धव[2] चपला बला सी गला
घोंट मम दीन[3] सी हसीन हसरत का।
जा रही सलीब[4] सी रकीब[5] के करीब छीन
मुझसे गरीब का नसीब शहादत का।।

1. तरकीब 2. पति 3. मजहब
4. फाँसी 5. (प्रेम में) प्रतिद्वन्दी

१८६

दे मुझे मलाल, कर में ले वरमाल, काल-
बाला छोड़ पाला चली मिलने भगत से ।
अनुज-वधू के नाते को लजा के चाहे प्रेम-
परिरंभ[1] ठेठ जेठ जैसे हजरत से ।
मौत भी गरीब की कमाई सी हुई पराई,
आई बेवफाई से न बाज फितरत से ।
पारा सी आवारा विष्णुदारा[2] मान ज्यों नकारा
ले ले छुटकारा सर्वहारा[3] - निसबत[4] से ॥

१८७

किन्तु मेरे रहते मजाल किसकी है, बाल-
बाँका भी जो कर जाए अग्रज भगत का ।
झाला की तरह मौत का मसल के इरादा
गाज सा गिरूँगा रूप धार कयामत[5] का ।
देश की इबादत में प्राण-पुष्प-दान को भी
दुनियाँ कहे तो कहे काम हिमाकत[6] का ।
मृत्यु - रमणी - रमण - हेतु मैं पियूँगा आज
आबे-जम-जम[7] जैसा जाम शहादत का ॥

1. आलिंगन 2. लक्ष्मी 3. सम्पत्ति एवं अधिकारों से वंचित (समाज)
4. लगाव 5. प्रलय 6. बेवकूफी 7. अति पवित्र जल (मुस्लिम मजहब में)

१८८

दौड़ है ये जिन्दगी की, दौड़ ले, निभा दे फर्ज,
हर्ज क्या है एक बार जोर अजमाने में।
होती नरवीर की अमरता निहित आन-
बान - शान पै प्रदान प्राण कर जाने में।
अब्धि[1] में उतर कुछ लब्धि[2] चाहता अगर,
क्या धरा खड़े खड़े किनारे पछिताने में।
सुलग-सुलग जीने से भला है चिनगी सा
ही चमक, बुझ जा सुहृद को बचाने में।।

१८९

निश्चय किया कि अनुगामी हूँ, मगर आज,
यह अनुगामी आगे जाके दिखलाएगा।
बन्धन जरूरी यदि एक का हुआ तो बन्दा
हथकड़ी इन हाथों में ही डलवाएगा।
खुद को फँसा के यदि इसने बचाया तुझे,
माफ न कभी भी खुद को तू कर पाएगा।
ये रकीब मर के भी अमर बनेगा पै तू
राजगुरु ! जिन्दा रह के भी मर जाएगा।।

1. समुद्र 2. लाभ

१९०

चनन भगत पै झपटने की घात में था,
राजगुरु गर्दन लपकने चनन की।
आतुर था राहु मानो सूरज - ग्रहण - हेतु
चाँद में उतावली थी राहु के ग्रहण की।
हो रहे समीप से समीपतर तीनों देख
दूर होती दूरियाँ बदन से बदन की।
ऊहापोह[1] के जटिल जाल में उलझ गई
शेखर की कामना चनन के हनन की॥

१९१

दौड़ता शिकार देख दोनों प्राण-प्यारों बीच
कर थर - थर ममता में काँपने लगा।
झाँकने लगा हृदय बगलें, भरोसा लक्ष्य-
भेद का डिगा, अनिष्टभय जागने लगा।
समय नहीं था, अविलम्ब करना था कुछ,
संकट विकट धैर्य - सीमा लाँघने लगा।
साध के निशाना वीर प्रिय अनुजों के हेतु
होके नेह - विकल कुशल माँगने लगा॥

1. असमंजस

१९२

ध्यान धर इष्ट, लक्ष्य साध, चूम माउजर,
साहस बटोर, धरी ट्रिगर पै तर्जनी ।
तीन बार उसे अनुधावन - विवर्जनी[1] दी
घन - गर्जिनी चितावनी भय - प्रवर्धिनी ।
माना नहीं फिर भी तो हो निरनुकंपा[2] गोली
शंपा[3] को लजाती चली पंपाल[4] - विमर्दिनी ।
उदर - विदार आर - पार हुई बार - बार
गूँजी चीख चनन की गगन - विसर्पिणी ॥

१९३

दूसरे ही क्षण तन होके प्राणहीन गिरा
रक्त की फुहारें छोड़ने लगा शरीर था ।
फर्ज की अदायगी का दस्तावेज सा शरीर,
धरती पै बगरा रुधिर तहरीर था ।
एक भारतीय के अकाल काल का निमित्त
मान खुद को वो धैर्य - धनी भी अधीर था ।
मुग्ध स्वामिभक्ति के विरुद्ध शुद्ध देश-भक्ति
का ये दर्दनाक दृश्य एक बेनजीर था ॥

1. पीछे-पीछे भागने को मना करती हुई
2. दया रहित
3. बिजली
4. पापी या दुष्ट

१६४

लाँघ के दीवार तीनों वीर हो गये फरार,
नगर - तजन का जतन जोहने लगे।
चप्पे - चप्पे पै नियुक्त पुलिस व गुप्तचर
घड़ों में भी हाथी हाथ डाल खोजने लगे।

मच गया देश में तहलका, असंख्य लोग
क्रान्ति सपूतों की 'जैहो जैहो' बोलने लगे।
थोड़े से फिरंगी चाटुकार नर - पामरों की
छातियों पै किन्तु काले साँप लोटने लगे।।



असेम्बली-बमकाण्ड

१९५

पा रहा था रोष देश में तुषाग्नि[1] सा प्रसार
श्रमिकों की शोषण - विरोधी हलचल से
सुनती नहीं थी किन्तु अँगरेजी सरकार,
बद्धकटि थी दमन हेतु छलबल से
ट्रेड्डिस्प्यूट बिल पास करवाने को वो
थी प्रयत्नशील चमचों की रलमल[2] से
सरकारी चाल को विफल करने के हेतु
दत्त - भक्त की हुई नियुक्ति क्रान्तिदल से

---

1. भूसे में लगी आग
2. मिली भगत

१९६

आठ अपरैल वर्ष उनतीस ईसवी को
पेश हुआ बिल मरकजी सभागार में
दर्शकों की गैलरी में दत्त - भक्त दोनों खड़े
बेसबर सही वक्त के थे इन्तजार में
लातों वाले भूतों हेतु बातों का महत्त्व क्या था
बाँसुरी का मूल्य क्या नगारों की गुँजार में
अस्तु बम के धमाकों के बहाने जनरोष
था गुँजाना अंधों - बहरों के दरबार में

१९७

बिल पर हुआ मतदान, परिणाम ज्यों ही
संसद - सभापति पटैल खोलने लगे
त्यों ही बमों के धमाके सर्वहारा-हुंकृति[1] से
कान धराधीश बधिरों के फोड़ने लगे
जागी धक - धक धूम - धुंध धकापेल बीच
भाग - भाग लोग सभाधाम छोड़ने लगे
गरज - गरज दोनों शेर 'इन्किलाब जिन्दा-
बाद इन्किलाब जिन्दाबाद बोलने लगे'

1. हुँकार

१६८

धाड़-धाड़ ध्वनि - प्रतिध्वनियों से गूँज उठा
हाल, गड़बड़ हुए होश खड़भड़ में
भागे खौफ खाके, पग काँपे, भहरा के गिरे,
कोई सुनता न था किसी की हड़बड़ में
छूटे हैट, कागज, कलम, करपट[1] छूटे
छूटे तन से पसीने भारी भड़ - भड़ में
फिर भी डटे थे बी. के. दत्त भक्त सिंह दोनों
चाहते तो वे भी भाग लेते भगदड़ में

१६६

क्रान्तिकारी गुप्त संगठन के विरुद्ध फैले
भ्रम-परिवाद[2] आदि जड़ से मिटाने को
सहयोग और हमदर्दी आम आदमी की
पाने, चेतना समाजवादी उमगाने को
न्यायालय मंच द्वारा बमकाण्ड का महत्व
रूपरेखा क्रान्ति की सभी को समझाने को
होना था गिरफतार योजनानुसार उन्हें
नाम इतिहास में अमर कर जाने को

1. रूमाल
2. निन्दा

२००

थोड़ी देर बाद आ गई पुलीस और दोनों
वीरवर स्वेच्छया गिरफतार हो गये
सान्डर्स काण्ड के प्रमुख अभियुक्त वीर
भगत शहीदों में तभी शुमार हो गये
करके अदालत के फैसले का अनुमान
दल बिनप्राण, साथी बेकरार हो गये
सेनापति शेखर भगत के बगैर दीन
लखन - विहीन राम से असार हो गये

२०१

हाथ लगते ही सूत्र सक्रिय हुई पुलीस
संदिग्ध ठिकानों पर छापे पड़ते गये
जासूसी विशाल जाल से न बच पाया कोई
बारी - बारी सारे क्रान्तिकारी फॅसते गये
राजगुरु, सुखदेव, कुन्दन, यतीन्द्र, महा-
बीर जैगुपाल औ फणीन्द्र पकड़े गये
कमल त्रिवेदी, गया, विजय, किशोरी, प्रेम
आदि जो भी मिले सलाखों में जकड़े गये

२०२

कमजोर साबित हुए फणीन्द्र जैगुपाल
मुखबिर होके सारे भेद खोले दल के
जयदेव और शिववर्मा बम कारखाने
में ही पकड़े गये, न जा सके निकल के
पूना जाते हुए सदाशिव, भगवानदास
स्टेशन पै धर लिये गये भुसावल के
इसी बीच ट्रेन इरविन की उड़ा दी गई
पल के विलम्ब ने बचाए प्राण खल के

२०३

आते-जाते जेल से भगत को छुड़ाने की भी
शेखर के द्वारा एक बार योजना बनी
किन्तु बम को परखने में वोहरा जी हुए
सहसा शहीद साहसी महान धी - धनी
दूसरे दिवस घर में रखे दो बम और
फटने से पड़ी योजना ही वो विसारनी
सच है कि रह जाता पीछे पुरुषार्थ सारा
जब कोई होनी अनहोनी होती अग्रणी

२०४

मास - द्वय तीन दिन भूख हड़ताल कर
कारा में यतीन्द्र दा अनन्त नींद सो गये
राजगुरु, सुखदेव, भगत सजा - ए - मौत
पाके काल कोठरी के हकदार हो गये
सात को आजन्म काला पानी, बचे जो भी शेष
भेजे जेल में सभी अनेक साल को गये
इस भाँति न्यायाधीश न्याय की पवित्रता को
पक्षपात के कलंक - पंक में डुबो गये

२०५

सरदार भगत को प्राणदण्ड ही मिलेगा
क्रान्तिकारी दल में सभी का ये खयाल था
शौके - शहादत में भगत की बराबरी के
अभिलाषी राजगुरु को यही मलाल था
क्योंकि फाँसी के इनाम का प्रथम हकदार
माने था वो खुद को, न गैर का सवाल था
मृत्युदण्ड उसकी नजर में भगत हेतु
था हराम, सिर्फ उसके लिये हलाल था

२०६

भगत के साथ होगी फाँसी राजगुरु को भी,
सुनते ही फैसला न उसने अबेर की
साथियों को चूम-चूम मिलने लगा गले वो
रंक पा गया हो मानो संपदा कुबेर की
बलिदान में प्रथम रहने की होड़, हौंस,
व्यग्रता, दिलेरी दर्शनीय थी दिलेर की
मातृभूमि हेतु प्राणदान में प्रवण[1], देश-
भक्त - रत्न - मालिका - समुज्ज्वल - सुमेर की

२०७

दल में 'विलेजर'[2] के उपनाम से प्रसिद्ध
सुखदेव नागरों में अग्रगण्य हो गये
रात-दिन सो के न अघाने वाले राजगुरु
बने जागरण के प्रतीक, धन्य हो गये
सर्वहारा - वर्ग - हित - चिन्तक भगत देश
की जवानी के अनन्य अनुगम्य हो गये
परतंत्रता - तिमिर - ग्रस्त देश में ज्वलन्त
जीवन जिये, जहान में प्रणम्य हो गये



1. निपुण
2. देहाती

संस्मरण

२०८

भगवानदास पढ़ते थे ग्वालियर मध्य
एक छात्रावास में निवास करते हुए
छात्र वहाँ के दिखा के भूत नव-आगतों को
होते थे प्रसन्न उन्हें देख डरते हुए
भयप्रद शोर, अस्थिपंजरों का नृत्य साथ
दिखलाते शोले पादपों से झरते हुए
मुख से निकालते हुए अनल ज्वाल घोर
दिखते थे भूत छतों पै विचरते हुए

२०६

पहुँचे प्रथम बार शेखर वहाँ तो एक
इनके लिये भी भूत - नाटक रचा गया
चालू होते ही उछल - कूद भूतों की सभी ने
दरसाया मानो डर उरों में समा गया

कोई लेट गया ढक चादर से मुँह, कोई
काँपा, कोई रोया, कोई दहसतिया गया
शेखर ने पूँछा, 'यह क्या है' किन्तु भूत-भय
मानो सब की जुबाँ पै ताला सा लगा गया

२१०

'भूत नहीं, किसी धूत की है करतूत' बोले
और कुछ रोड़े ले के लक्ष्य साधने लगे
मारे सन्सनाते हुए चार-छै सही निशाने
मिनटों में भूतों के भी भूत भागने लगे

देख के निडर वीर शेखर का उग्र रूप
भूत - लीलायोजकों के प्राण काँपने लगे
सबने मनाया वास्तविकता बता के और
सेतु वीर की प्रशस्तियों के बाँधने लगे

□

२११

चल रहा था मनोविनोद, दल के सदस्य
थे विराजमान आगरे के एक घर में
किसी ने कहा कि हजरत राजगुरु सोते-
सोते धरे जाएँगे कहीं किसी सफर में

विजय - भगतसिंह होंगे समादृत दोनों
हथकड़ियों से किसी चल - चित्र - घर में
बंदी होंगे चाँद देखने में दत्त - चित्त दत्त[1]
पूनम की यामिनी के दूसरे प्रहर में

२१२

भगत इशारा कर शेखर की ओर बोले
'बड़े भाई ! आप छले जाएँगे शिकार में
किसी धोखेबाज से हो आहत अचेत कहीं
होंगे पड़े घाटी - नदी - नाले के कछार में

होश आने पै चकित होके सोचेंगे कि अरे
ये क्या हुआ ? हम कैसे आए कारागार में ?
सेहत बनाएँगे जनाब फिर दण्ड पेल
काल - कोठरी में फँसरी के इन्तजार में'

1. बटुकेश्वरदत्त

२१३

बोले वीर, 'बेड़ी-हथकड़ी, पेशी और फाँसी
ये बवाल तेरे इस भाई से न निभना
फाँसी हो मुबारक तुम्हें ही, चाहता हूँ मैं तो
रक्त से धरा पै बलिदान - लेख लिखना

जब तक यह 'बमतुलबुखारा'[1] है पास
खूब अजमाले जोर जिसमें हो जितना
कैद करना तो दूर, जिन्दा रहते बदन
छू ले किसने पिया है दूध माँ का इतना ?'

□

२१४

अपने अचूक निशाने के लिये सुप्रसिद्ध
शेखर को देख काँप जाते थे बड़े - बड़े
ऐसा रुतबा था, ऐसी धाक नर-नाहर की,
टेढ़ी नजरों से खौफ खाते थे बड़े - बड़े

नाम सुनते ही छूट जाता था पसीना, बात
करते हुए भी हकलाते थे बड़े - बड़े
आम सिपाही की बात कौन करे, पुलिस के
तीस - मार - खाँ भी कतराते थे बड़े-बड़े

1. आजाद अपने माउजर को इसी नाम से पुकारते थे

२१५

कानपुर स्टेशन की घटना है, एक बार
तड़के सवेरे भाई[1] ट्रेन से थे उतरे
सामने डटे थे गुप्तचर अधिकारी एक,
ऊपर से तने-तने भीतर से सिहरे
साथ-साथ पूरे प्लेटफार्म पै खड़े अनेक
बावर्दी पुलीसवाले चारों ओर बिखरे
देखते ही एक क्षण सोचा, फिर सीधे जाके
बोले उससे बगैर चिकनाए चुपरे

२१६

'मेरा नाम है आजाद, काम अपना करूँ मैं
काम अपना जनाब चुपचाप कीजिये
बीबी-बच्चों का विलाप सुनने की हौंस हो तो
फिर हैं स्वतंत्र, चाहे जो प्रलाप कीजिये
खून कीमती है, इसे व्यर्थ में बहाना पाप,
पाप न तो मैं करूँ, न पाप आप कीजिये
जब तक मैं निकल जाता नहीं गेट पार
नैन मूँद आप राम-राम जाप कीजिये'

---

1. आजाद

२१७

शेखर को सहसा समीप इतने विलोक
सकते में आ गया वो, बन्द हुई बोलती
लकवा सा मार गया, जड़ हुई बुद्धि, सन्न
रह गई देह, थी न हिलती न डोलती
यों लगा कि मौत आके यों तो जा चुकी है किन्तु
साथ ले गई समग्र चेतना निचोरती
इसी बीच वीर द्वार - पार हो गये, पुलीस
देखती रही कुशल - मंगल निहोरती

□

२१८

वर्ष तीस की है बात, अमानुल्ला जेलर था
अँगरेज - भक्त कानपूर - कारागार में
कुछ सत्याग्रही महिलाएँ जेल में थीं बन्द
जेलर था अन्धा पद - मद के गुबार में
महिलाओं को सिंदूर चूड़ियों से महरूम
रखने का हुक्म दिया साहिबी खुमार में
जेलर के हुक्म की तामील हो सकी न, वीर
महिलाओं ने दिया जवाब इनकार में

२१९

फिर क्या था ऐंठ इठलाने लगी जेलर की
पारा चढ़ गया खोपड़ी का आसमान में
जितना अधिक जोर-जुल्म होता नारियों पै
खुश होता उतने ही अधिक प्रमाण में
व्यर्थ गये नागरों के नम्र निवेदन सभी,
जूँ रिंगा न पाया कोई बहरे के कान में
खबर मिली तो खौरिया[1] के लिखा शेखर ने
खत खल खान को खरी - खरी जुबान में

२२०

श्रद्धा और आदर के योग्य, ममतामयी है,
जन्मदायिनी है वह कौम इनसान की
प्रेम की गहनता में सागर नहीं है कुछ
त्याग की महत्ता में बुलन्दी हिमवान की
भूल मत रे ! फिरंगियों के चमचे ! अरे ये
तहजीब[2] नहीं देश अपने महान की
वन्दनीय बन्दी नारियों से बत्तमीजी बन्द
खान ! कर दे जो खैर चाहता है जान की

1. क्रुद्ध होकर
2. सभ्यता

२२१

वर्तमानकाल का महान् वैद्यराज हूँ मैं
नाम का है फर्क मुझमें व यमराज में
अकसीर गोलियाँ हमारी हर मर्ज हेतु
एक ही बहुत होगी तेरे भी इलाज में
पत्र पढ़ा होश आ गये ठिकाने जेलर के
विनय झलक उठी हर काम - काज में
शेखर के लक्ष्यभेद - लाघव[1] की धूम धाक
धौंस बरपा थी ऐसी शासक समाज में

□

२२२

एक दिन साहित्य-संगीत का विषय ले के
चर्चा की शुरू भगत - विजयकुमार ने
बी. के. दत्त भगवानदास भी लगे विचार
व्यक्त करके विषय - वस्तु को निखारने
कुछ देर बाद मान भगतानुरोध गीत
भगवान दास लगे सस्वर उचारने
मनमथशर[2] के हिये में लगने की बात
जिसमें कही थी रुच - रुच गीतकार ने

1. लक्ष्य को भेजने की फुर्ती
2. कामदेव का बाण

२२३

बोले वीर[1], 'क्या ये पिन-पिन करता है साला
मन इन बातों में खराब क्या करेंगे हम ?
मनमथ - शर नहीं, सीने में लगेगी गोली
सिर्फ थिरी नाट थ्री की, उसी से मरेंगे हम

छोड़ ये पराग-राग, छेड़ कोई आग - राग,
तौल पिसतौल सीना तान के लड़ेंगे हम
गा रे! दुश्मनों की गोलियों का सामना करेंगे,
आजाद रहे हैं, सदा आजाद रहेंगे हम'

***

1. आजाद

अमर-बलिदान

२२४

उदय हुए थे दिनमणि[1] लालिमा लिये पै
विधि का विधान देख पियराने से लगे
निज - तेज - अंश पै तमिस्र की कुदृष्टि देख
मुख हो गया सफेद, सियराने से लगे
ठहरे सदागति[2] विलोक व्यतीपात[3], दुखी
चित्त चर - अचर के बिहराने से लगे
सिहरी सिहारि सुत - संकट वसुन्धरा के
अरमान - घन मानो छितराने से लगे

---

1. सूर्य
2. पवन
3. उपद्रव

२२५

सभय, विवर्ण[1], स्तब्ध पीपल खड़े विपर्ण
मौन शुक - सारिकाओं के कबीले हो गये
नभ चढ़ सारस पुकारें त्राहि - त्राहि, देख
कलुष कुठाट मन दरदीले हो गये
मानवी कृतघ्नता पै रो दिये सशोक श्वान
सविषाद वानरों के नैन गीले हो गये
गीध बोले, धिक-धिक, नर तो निरे बधिक
वक्र नागों से अधिक जहरीले हो गये

२२६

सत्ताइस फरवरी सन इकतीस प्रात-
वेला अलफ्रेड पार्क मध्य में प्रयाग के
पाके मुखबिर से खबर विसेसर[2] आया
संग नाट बाबर अधीक्षक विभाग के
आया बिन पद चाप के पुलिस दल साथ
घेरा डाला शेखर के चारों ओर भाग के
शलभ चिराग के ज्यों, जलद निदाघ के ज्यों,
शीतभीत आग के ज्यों वासना विराग के

1. बदरंग 2. विश्वेश्वर सिंह गुप्तचर अधिकारी

२२७

गोली नाट बाबर ने बिना सावधान किये
धोखे से चलाई, टूटी दाहिनी कलाई थी
गोली का जवाब दिया गोली से निमिषमध्य,
लत्ता जैसी नाट की कलाई लटकाई थी
एक झोंके में ही खाट खड़ी की फिरंगियों की
आड़ पेड़ की ले जान सबने बचाई थी
एक ओर जूझता अकेला नर - नाहर था
एक ओर सारी सरकार आतताई थी

२२८

छिप गये पादपों की आड़ में बचे वही, जो
सामने पड़े, वो काल के हवाले हो गये
साहस दिखाने का दुसाहस किया जिन्होंने,
रण-चण्डिका के मुख के निवाले हो गये
प्रखर प्रताप के समक्ष चन्द्रशेखर के
शत्रु जुगुनू की पूँछ के उजाले हो गये
गोलियों की मार वयतरणी की धार बनी,
डूबने को बावले पुलीसवाले हो गये

२२९

चक्रवात के घनों की भाँति पल भर में ही
होके एक - एक गेरा, बँटे तीन - तेरा में
नहले पै दहला लगा के दहलाए दिल
नौ दो ग्यारा हुए रिपु एक ही अभेरा में
सोचती पुलीस असहाय होके अस 'हाय !
घर से चले थे जाने कौन सी कुबेरा में'
पाठ सोला दूनी आठ का पढ़ाना भूले और
भूली तीन - पाँच, रहे तीन में न तेरा में

२३०

'भागने न पाए' का मचाए थे जो शोर, वही
भागे सिर पर धर पैर मारे डर के
बचने न पाये बोले जो, वही न बच पाये,
मारो - मारो बोले, वही ढेर हुए मर के
लोक के रहे न परलोक के रहे बिचारे,
धोबियों के श्वान हुए, घाट के न घर के
बाएँ अंग फरके सिपाहियों के साथ - साथ
दाएँ अंग उनकी लुगाइयों के फरके

२३१

सारे बढ़ - बोले इस भाँति दिखते थे मौन,
भय की सुई से मानो मुख हों सिये हुए
शौकिया हुए हों या कि इत्तफाकिया[1] हुए हों,
सामने हुए उन्हीं के तंग काफिये हुए
ध्वस्त योजनाएँ, पस्त हौसले हुए समस्त
ठंढे रिपु - कलाबाजियों के ताजिये हुए
मुख पीले - पीले, अधरोष्ठ नीले - नीले, ढीले-
ढीले पायजामे, गीले - गीले जाँघिये हुए

२३२

अलफ्रेड पार्क लगता था मानो डाकघर
डाक बाँटने को वीरवर सावधान थे
गलत ठिकाने पै न जाने पाए पत्र कोई
जिम्मेदार डाकिये के बने प्रतिमान थे
ट्रिगर दबाते, मानो मोहर लगाते, भरे
माउजर - झोले बीच मौत - फरमान थे
कारतूस - चिट्ठियाँ, बारूद - रोशनाई, शत्रु-
छातियों में छर्रे मजमून के समान थे

1. संयोगवश

२३३

गाली बकने को मुँह खोला ज्यों विसेसर ने
एक दृष्टिपात से ही बिजली गिराई थी
पल भी न बीता, गोली चली जिमि चीता और
जबड़े से रीता किया मुख यों सिधाई थी
फुरती निशाने दोनों देखो वीर बाँकुरे के
इन्द्रजाल था या सिर्फ हाथ की सफाई थी
गाली गलियारा गले का न पार कर पाई,
गोली उससे गले में जा के टकराई थी

२३४

अंग-अंग घाव मानो फूली हो पलाश-यष्टि
किंवा बजरंगी रणरंगी हनुमान था
अस्ताचल - गामी दिनकर सा प्रदीप्त मुख
चारों ओर रक्त - तेज - पुंज विद्यमान था
दायाँ हाथ घायल हुआ था नर - नाहर का
रक्त लाल - लाल जाँघ से प्रवहमान था
लेके वामकर माउजर चक्रव्यूह बीच
घिरे अभिमन्यु सा मचाए घमासान था

२३५

असि धाराव्रती क्रान्ति के महारथी के प्राण-
रक्षण को आड़ दे स्वप्राणों पर खेलता
स्वातंत्र्यसमर से विरक्त कायरों की क्षुद्र-
स्वार्थपरता पै लानतें हजार पेलता
तनत्राण[1] जैसा एक तनहा[2] तरुण तरु
तन के खड़ा था शत्रु - साजिशें नकेलता
अतनु[3]तने पै अपने तड़ित जैसी ताड़-
ताड़ करतीं तमाम गोलियों को झेलता

२३६

एक पै अनेक मिल गोलियाँ चलाओ मत
हिल - हिल पात नवजात कहने लगे
घाव क्रान्ति - केतन[4] के तन के विलोक घात[5]
गोलियों के पात पुष्टगात सहने लगे
लेकर अपार तरु की व्यथा का भार मानो
अश्रु के निपात पीतपात ढहने लगे
प्रण प्राण त्यागने का मानो ऐसी जिन्दगी से
माँगते निजात[6] सूखेपात गहने लगे

1. कवच 2. अकेला 3. स्थूल
4. क्रान्ति के ध्वज अर्थात् क्रान्तिकारियों के नायक 5. चोट 6. मुक्ति

२३७

बदन गठीला ढीला पड़ने लगा, हठीला
मन करने लगा भविष्य परिभावना[1]
माउजर होते साथ गात में लगा दे हाथ
शत्रु, होगी चिर-धृत-व्रत-अवमानना[2]
घाव-घाव-रक्त-स्राव-अन्य-चेतना-अभाव
परिणाम पीर-पारावार अवगाहना
सांस रहते शरीर सौंपने का अर्थ होगा,
काल-कोठरी की घोर सांसत[3] विगाहना

२३८

देख सिर्फ एक गोली शेष निज मकर के
साथी रिपु-कम्पन-समर्थ-माउजर में
कौंधा बार-बार कृतकौल फिर एक बार
'जीते जी न जाना बंदी-जीवन बहर में'
अस्तु जन्मभूमि, जननी को आखिरी प्रणाम
भेंट, वीर जीवन के अंतिम प्रहर में
माथे से लगा के माउजर, दाब के [illegible]
हो गया अनन्तलीन मुक्ति की डगर में

---

1. भविष्य की चिन्ता 2. चिरकाल से धारण की हुई प्रतिज्ञा का अपमान
3. फजीहत

२३९

सीस से सुगंग, बाहुओं से सिन्धु - ब्रह्मपुत्र
और नर्मदा भी वक्ष से निकलने लगी
विन्ध्य सी कठोर कटि तोड़ रक्त - गोदावरी
धाई धरती पै धरा - धुरी हिलने लगी
कृष्णा उछली सघन जघनथली से तभी
धोती पग - धूल सी कावेरी लगने लगी
रक्त चारों ओर इस भाँति फैलने लगा कि
देश की अखण्ड तसवीर ढलने लगी

२४०

रक्त से बना हुआ था भारत का मानचित्र
बीच पड़ा वीर का शरीर बिन प्राण था
या कि महाक्रान्ति की धधकती धँधार[1] बीच
सारा हिन्द देश जूझता लहूलुहान था
अथवा धरा की गोद लेटा था धरणिपुत्र[2]
चारो ओर तेज - पुंज सा विराजमान था
या कि रक्त - सागर नहा के विसराम हेतु
विद्रुम - पुलिन[3] देव - द्विप[4] विद्यमान था

---

1. ज्वाला
2. मंगल
3. मूँगों का बना हुआ तट
4. ऐरावत

२४१

पराधीनता की निशा के लिये विहान थे तो
मुक्ति के विहान हेतु दिव्य दिनमान थे
उर - वर[1] बना उर - ऊसरों में बोते रहे
बीज - देशभक्ति ऐसे बिकट किसान थे

राष्ट्रद्रोह के असाध्य रोगियों को गोलियाँ
प्रदान करते हुए हकीम लुकमान थे
फाँके कर-कर के भी काँटे देश - वाटिका के
छाँटे एक - एक ऐसे बाँके बागबान थे

२४२

सिंह के समान जिये, सिंह के समान मरे,
जीवन - मरण का सलीका यों सिखा गये
बीन - बीन मारे मुखबिर इस भाँति देश-
द्रोहियों को मजा देशद्रोह का चिखा गये

मातृभूमि के सव्याज-ऋण को चुका के गये,
भावी पीढ़ियों को एक राह सी दिखा गये
मर के अमरपद पाने वालों में प्रथम
नाम निज देश के सपूतों में लिखा गये

1. हृदय को श्रेष्ठ या उपजाऊ

२४३

ज्ञानी निज - धर्म के थे, मानी आत्मगौरव के
लासानी निशानी थे वे देश की जवानी के
कायराना सोच के विरोधी, शौर्य के प्रतीक,
धीर सेना - नायक स्वतंत्रता की रानी के
सुन - सुन सूखते थे प्राण देश - द्रोहियों के
यशोगान वीर बलिदानी स्वाभिमानी के
सानी नहीं जिसका वो पानी मरदानगी के
केन्द्रविन्दु थे सशस्त्र क्रान्ति की कहानी के

२४४

परदेशी शासन - दहन को बगावत की
ऐसी कौन आग जो लगाई वीर ने नहीं
पराधीनता का तम हरने को ऐसी कौन
जाग्रति की ज्योति जो जगाई वीर ने नहीं
क्रान्ति की फसल को सफल देखने को ऐसी
कौन पीर - पाँस[1] जो पँसाई वीर ने नहीं
दीन - दलितों के हित - चिन्तन में ऐसी कौन
रात जाग - जाग जो बिताई वीर ने नहीं

***

1. पीड़ा रूपी खाद